जुलाई 1987 मूल्य 2 रुपये

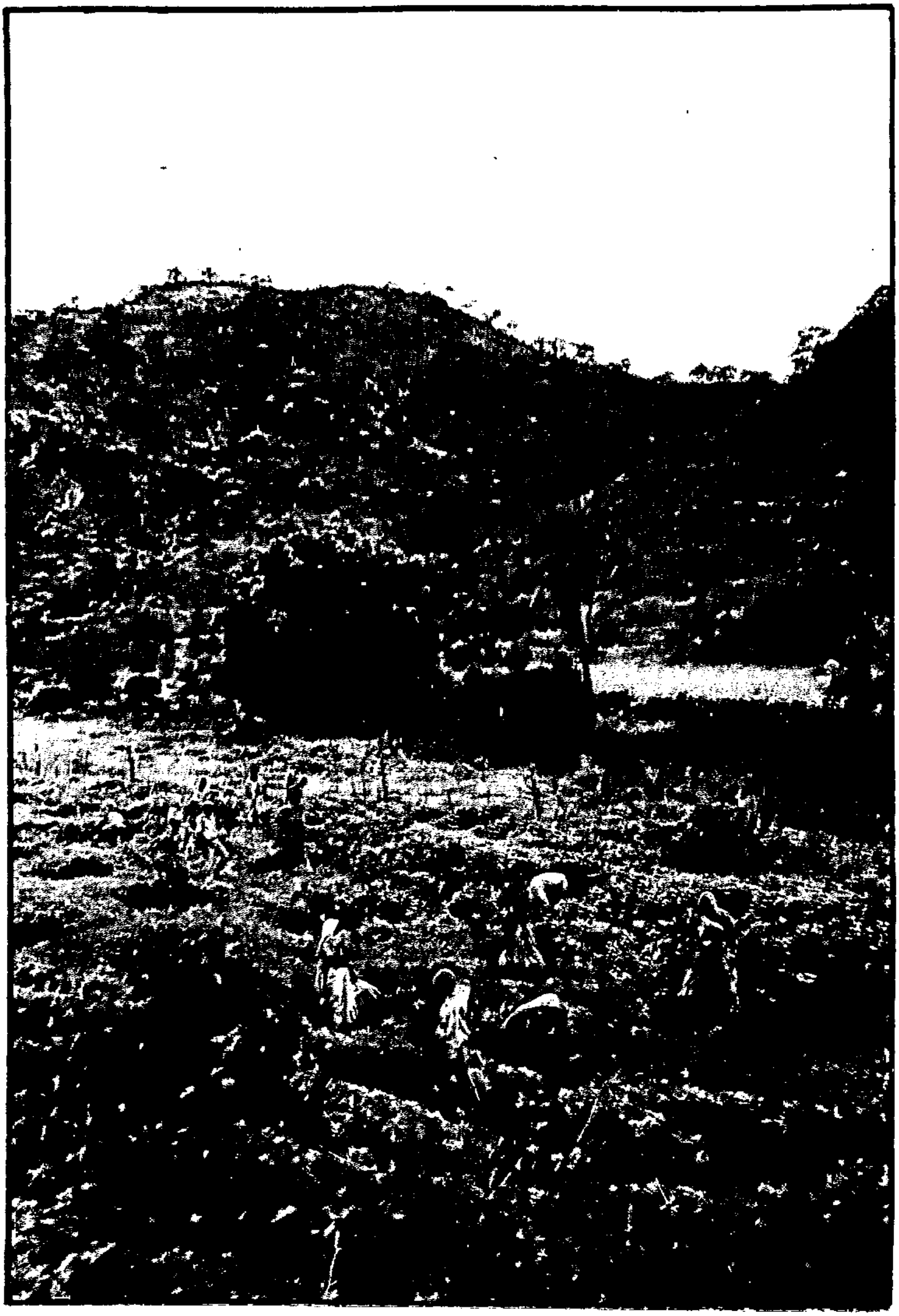

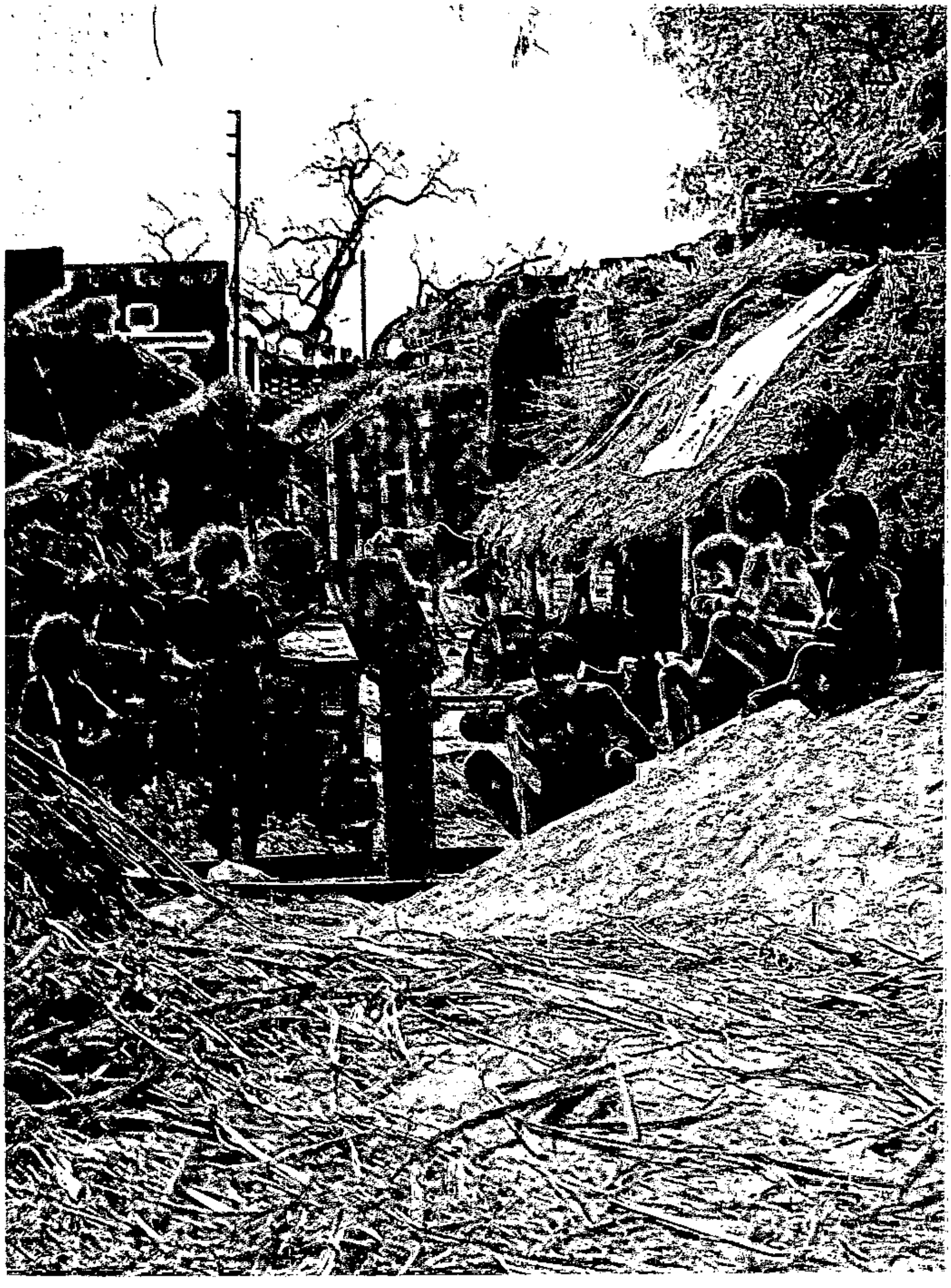

15. तंग बस्तियों का सुधार

हमः

- तंग बस्तियों की संख्या बढ़ने से रोकेंगे;
- वर्तमान तंग बस्तियों में बुनियादी सुविधायें देंगेः और
- शहरी इलाकों में सुनियोजित गृहनिर्माण कार्य को प्रोत्साहन देंगे।

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास का प्रमुख मासिक

वर्ष—32 आषाढ़ – श्रावण शक 1909 अंक 9

इस अंक में — पृष्ठ संख्या

ग्रामीण आवास — 2
जे. पी. यादव
वनों का महत्व अब गांव वालों की समझ में आया — 5
अशोक कुमार यादव
भीलवाड़ा जिले में फलता-फूलता ''भेड़ पालन व्यवसाय'' — 6
श्याम सुन्दर जोशी
पिछड़े वर्गों का उत्थानः समस्या और समाधान — 10
अतुल माथुर
ग्रामीण आर्थिक विकास — 13
श्रीकान्त यादव
गांव की ओर (कविता) — 16
संतोष 'निर्मल'
आदिवासी विकास — 22
एस.एन. भट्टाचार्य
आंधी के बाद की शांति — 25
डॉ. शीतांशु भारद्वाज
ग्राम्य-खुशहाली में सक्रिय हिस्सेदारी — 28
आशीष खरे
गुजरात में सौर ऊर्जा से स्ट्रीट लाईट का अभिनव प्रयोग — 31
जयन्त रेलवाणी
सुन्दर अपने गांव हों — 32
मोहन चन्द्र मन्टन
वृक्ष पूजा के पात्र हैं — 36
राजेन्द्र परदेसी

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी कविता, संस्मरण, हास्य-व्यंग्य चित्र आदि भेजिए।

●

अस्वीकृत रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है।

●

'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने, पता बदलने या अंक न मिलने की शिकायत, व्यापार व्यवस्थापक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 से कीजिए।

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार : सम्पादक, कुरुक्षेत्र (हिन्दी), कृषि तथा ग्रामीण विकास मंत्रालय, 467, कृषि भवन, नई दिल्ली के पते पर करें।

दूरभाष : 382406
एक प्रति : 2.00 रु.
वार्षिक चन्दा : 20 रु.

सहायक सम्पादक : गुरचरण लाल लूथरा

उप सम्पादक : राकेश शर्मा

सहायक निदेशक : राम स्वरूप मुंजाल
उत्पादन

आवरण पृष्ठ : जीवन अडलजा

आवरण चित्र : फोटो विभाग से साभार

ग्रामीण आवास

जे.पी. यादव
एवं
सुबहसिंह यादव

जीवन की आधार भूत आवश्यकताओं में भोजन एवं वस्त्र के बाद आवास की व्यवस्था सबसे महत्वपूर्ण है। आवास मानव का आश्रय-स्थल तथा मानवीय क्रिया कलापों का केन्द्र बिन्दु है। आवास वह जगह है जिससे मनुष्य में अपनत्व व सामाजिक जीव होने का बोध होता है। सामान्य अर्थों में आवास से तात्पर्य जनसंख्या के लिए रहने की मकान-व्यवस्था से लगाया जाता है लेकिन यदि व्यापक रूप से देखा जाये तो यह आवश्यक है कि रहने-सहने की यह जगह आरामदायक भी हो, जनसंख्या की आवश्यकता के अनुरूप हो ताकि लोग अपने परिवार की इकाई के साथ सम्मानपूर्ण जीवन व्यतीत कर सकें। आवास-समस्या का स्वरूप ग्रामीण व शहरी क्षेत्रों के लिए अलग-अलग है। भारत जैसे विशाल देश में जहाँ की 76.7 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में रहती है, ग्रामीण आवास पर ध्यान देने की महती आवश्यकता है।

ग्रामीण क्षेत्रों की आवास परिस्थितियों में सुधार एक विशाल कार्य है। स्वतन्त्रता के समय भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में आवास तथा सम्बन्धित सुविधाओं का अत्यधिक अभाव था। अधिकतर गांवों में कच्चे घरों या कच्ची झोंपड़ियों का बाहुल्य था जिनमें रसोईघर, स्नानगृह जैसी अनिवार्य सुविधाओं का अभाव था, परिवार तथा पशु प्राय: एक ही स्थान पर रहते थे। ग्रामीण सड़कें टेढ़ी-मेढ़ी, तंग तथा गन्दगी से युक्त थी। गांवों में नालियों, शौचालयों आदि का नितान्त अभाव था। अधिकांश ग्रामीण परिवारों की आर्थिक-स्थिति कमजोर होने के कारण अच्छा व आधुनिक आवास उनके बूते के बाहर की बात थी।

समय के साथ-साथ जनसंख्या में तेजी से हो रही वृद्धि तथा जीवन-यापन के स्तर में सुधार से आवास-व्यवस्था का प्रश्न जटिल होता जा रहा है। 1951 से 1981 की अवधि में ग्रामीण जनसंख्या 29.87 करोड़ से बढ़कर 50.76 करोड़ (असम को छोड़कर) हो गयी है। वर्ष 1981 में देश में 2 करोड़ 10 लाख मकानों की कमी थी जिनमें से ग्रामीण क्षेत्र में कमी 1 करोड़ 60 लाख मकानों की थी। सातवीं योजना के प्रारम्भ में देश में 2 करोड़ 47 लाख मकानों की कमी थी। सातवीं योजना के 5 वर्षों में बढ़ी हुई आबादी के लिए 1 करोड़ 24 लाख ग्रामीण क्षेत्रों के लिए विगत वर्षों में मकानों की जरूरत वाले परिवारों की संख्या तथा उपलब्ध मकानों की संख्या निम्नानुसार रही :—

तालिका
ग्रामीण आवास सम्बन्धी आंकड़े (संख्या-मिलियन में)

वर्ष	मकानों की जरूरत वाले परिवारों की संख्या	उपलब्ध मकानों की संख्या	मकानों की कमी
1961	68.6	57.1	11.5
1971	78.0	66.4	11.6
1981	93.5	77.4	16.1
1983	98.4	81.0	17.0

तालिका से स्पष्ट है कि जहां 1961 में मकानों की कमी 11.5 मिलियन थी बढ़कर 1981 में 16.1 मिलियन तथा 1983 में 17.4 मिलियन हो गई। ग्रामीण क्षेत्रों में बढ़ती हुई आवास की कमी को दूर करने के लिए विशेष प्रयास करने होंगे क्योंकि ग्राम-आवास में सुधार कृषि तथा ग्रामीण अर्थव्यवस्था के समग्र विकास से जुड़ा हुआ है। हमारी पंचवर्षीय योजनाओं में सुन्दर और स्वस्थ जीवन-यापन के लिए न्यूनतम आवास उपलब्ध कराने का लक्ष्य रखा गया है। संयुक्त राष्ट्र संघ ने वर्ष 1987 को "बेघरों के लिए आश्रय का अन्तर्राष्ट्रीय वर्ष" घोषित किया है। इसकी सफलता के लिए यह जरूरी है कि शहरी आवास के साथ-साथ ग्रामीण आवास पर विशेष ध्यान दिया जाये क्योंकि आवास-समस्या का एक बड़ा भाग ग्रामीण-आवास से सम्बन्ध रखता है।

सरकार ने ग्रामीण-आवास समस्या के समाधान हेतु समय-समय पर अनेक प्रयास किये हैं :—

ग्राम आवास योजना

यह परियोजना 1957 में शुरू की गई। इसका उद्देश्य 4 से 6 गांवों के वर्गों में खाका योजनाओं के अनुसार गांवों को पुनः इस प्रकार से ढालना है कि नालियों समेत गलियां पर्याप्त चौड़ी हो जायें, घरों तथा सामान्य सुविधाओं और भवनों के लिए उनके बीच उचित अन्तर या फासला हो। इस परियोजना में गलियों, सामुदायिक भवनों, नये गृह-स्थलों तथा जन-घनत्व को हल्का करने के लिए भूमि-अधिग्रहण की व्यवस्था भी की गयी। राज्य सरकारों द्वारा स्थापित ग्रामीण आवास प्रकोष्ठों की खाका योजनायें तथा ग्रामीण घरों के लिए उन्नत डिजायन तैयार करने की भी व्यवस्था है। घरों के निर्माण तथा सुधार के लिए 2000 रु. प्रति घर तक कर्ज सहायता दी जानी थी।

इस योजना ने कोई विशेष प्रगति नहीं की। जहां 1960-61 में केवल 1600 गांवों की खाका-योजनायें तैयार की गई तथा 15400 मकानों के निर्माण के लिए ऋण स्वीकृत किया गया जबकि देश में उस समय 5.4 करोड़ मकान थे। ग्रामीण समाज के स्वरूप के कारण इस योजना के संचालन में अनेक बाधाएं आईं, परिणामस्वरूप धीरे-धीरे इस योजना का उत्साह समाप्त हो गया।

हरित क्रान्ति तथा जोतों की चकबन्दी के परिणामस्वरूप कुछ समृद्ध किसान खेतों में जाकर बस गये। वहां उन्होंने अधिक सुखदायक मकान बना लिये जिनमें पशुओं, मशीनरी तथा उपकरणों व भण्डारों के लिए अलग-अलग व्यवस्था है। इससे ग्रामीण आवास व्यवस्था में सुधार हुआ है। एक ओर तो इनके द्वारा की गयी आवासीय व्यवस्था आरामदायक है तथा दूसरी ओर इनके द्वारा खाली किये गये मकानों व भू-स्थलों का अधिग्रहण करके खाका-योजनायें बनाने में सहयोग मिला है। इस तरीके से ग्रामीण आवास तथा रहने की परिस्थितियों में आधारभूत सुधार किया जा सकता है।

ग्रामीण भूमिहीन कार्मिकों के लिए गृह-स्थल तथा गृह-निर्माण हेतु सहायता की व्यवस्था

ग्रामीण भूमिहीनों को मकान बनाने हेतु जगह देने तथा उनके निर्माण हेतु सहायता देने हेतु आयोजन के प्रारम्भ से ही ध्यान दिया गया है। पहली योजना के दौरान कुछ राज्यों ने हरिजनों को आवासीय भूखण्ड सुलभ कराने के प्रयत्न किये। दूसरी योजना में हरिजनों तथा अन्य पिछड़े वर्गों को भूखण्डों तथा अन्य सहायता की व्यवस्था का सुझाव दिया गया। तीसरी योजना में बंजर भूमि तथा भूदान में मिली भूमि का उपयोग पिछड़े तबके के लोगों को आवास हेतु देने की सिफारिश की गयी। चौथी योजना में भूमिहीन कृषि श्रम परिवारों की, जो दूसरों की भूमि पर रहते थे, आवास भूमि का संरक्षण करने की आवश्यकता पर बल दिया गया तथा कमजोर वर्गों के लिए इन स्थलों पर भवन बनाने के लिए सहायता देने का भी सुझाव दिया गया। चौथी योजना के दौरान, 1972-73 में ग्रामीण भूमिहीन श्रमिकों को गृह-स्थल देने के लिए राज्यों को वित्तीय सहायता देने की एक योजना प्रारम्भ की गयी। 1973-74 तक इस कार्यक्रम में प्रगति सीमित रही। पांचवी योजना प्रारूप में इस योजना का स्तर बढ़ाकर इसे एक प्रमुख कार्यक्रम बना दिया गया और इसे "न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम" में सम्मिलित कर दिया गया। इस कार्यक्रम में 1978-79 तक 40 लाख गृह स्थल प्रदान करने के लिए 100 करोड़ रुपये की व्यवस्था की गयी।

छठी योजना में ग्रामीण भूमिहीन श्रमिकों को गृह-स्थलों के साथ उन पर आवास-निर्माण के लिए सहायता भी दी जाने लगी। इस कार्यक्रम का नाम "ग्रामीण भूमिहीनों के लिए आवास" रखा गया है। मार्च 1985 तक लगभग 1.45 करोड़

परिवारों के लिए सहायता का अनुमान लगाया गया था। योजनाकाल में 1.37 करोड़ परिवारों को गृह-स्थल आबंटित किये गये। तथ्य इस बात को बताते हैं कि अभी भी 7.2 लाख भूमिहीन परिवारों को भूखण्डों का आबंटन करना है। 36 लाख के लक्ष्य के मुकाबले योजनाकाल में 19 लाख परिवारों को भवन-निर्माण के लिए सहायता दी गयी।

सातवीं पंचवर्षीय योजना में पहले के बचे हुए 7.2 लाख भूमिहीन परिवारों को प्राथमिकता दी जायेगी इस हेतु 36 करोड़ रु. का विशेष प्रावधान किया गया है। योजनाकाल में पूर्व में भूखण्ड आबंटित लोगों को निर्माण सहायता देने का प्रयास किया जायेगा। 27.1 लाख परिवारों को भवन निर्माण हेतु 541 करोड़ रु. देने का प्रावधान किया गया है। आवासीय भूखण्ड हेतु सहायता 250 रु. प्रति परिवार से बढ़ाकर 500 रु. तथा निर्माण सहायता 500 रु. प्रति परिवार से बढ़ाकर 2000 रु. प्रति परिवार कर दी गयी है। योजना काल में ग्रामीण आवास हेतु 'न्यूनतम आवश्यकता—कार्यक्रम' के तहत 577 करोड़ रु. का प्रावधान किया गया है। 'हुडको' तथा 'सामान्य बीमा निगम' द्वारा भी 240 करोड़ रु. उपलब्ध कराये जाने का अनुमान है।

सातवीं योजना में आवास व्यवस्था के निर्धारित लक्ष्य को पूरा करने के लिए ग्रामीण परिवारों को आवास हेतु वित्तीय सहायता देने, 'सामाजिक आवास-व्यवस्था' स्कीमों में कीमत का निर्धारण कमजोर वर्गों, निम्न आय वर्गों और मध्यम आयवर्ग की अदायगी क्षमता को ध्यान में रखते हुए, भवन-निर्माण कार्यों की लागत घटाने के लिए कम लागत की आवास-प्रोद्योगिकी और मानकों के इस्तेमाल, सस्ती व स्थानीय भवन निर्माण सामग्री के विकास आदि पर विशेष ध्यान दिया जायेगा।

केन्द्र सरकार द्वारा देश में मकानों के निर्माण की गति तेज करने हेतु 'राष्ट्रीय आवास बैंक' की स्थापना की घोषणा की है। 100 करोड़ रु. की पूंजी से कायम होने वाला यह बैंक गृह निर्माण के लिए आर्थिक सुविधायें सुलभ करायेगा। यह बैंक स्थानीय तथा क्षेत्रीय, दोनों ही स्तरों पर आवास सम्बन्धी गतिविधियों को बढ़ावा देगा। सरकार इस बात का प्रयास कर रही है कि सन् 2000 तक प्रत्येक परिवार को आश्रय प्रदान किया जाये। इस लक्ष्य को पूरा करने के लिए शहरी आवास के साथ-साथ ग्रामीण आवास पर विशेष ध्यान देना होगा। छठी योजना अवधि में आवास हेतु रखे 1490.87 करोड़ रु. की तुलना में सातवीं योजना में 2458.21 करोड़ रु. का आबंटन किया गया है। संयुक्त राष्ट्र संघ ने वर्ष 1987 को 'बेघरों के लिए आश्रय का अन्तर्राष्ट्रीय वर्ष' घोषित किया है। आवश्यकता इस बात की है कि बेघर लोगों की स्थिति पर सहानुभूतिपूर्वक विचार करके उन्हें आवास उपलब्ध कराने के लिए उचित कार्यक्रम निर्धारित किया जाये। इसे सफल बनाने के लिए जन सहयोग जरूरी है।

आर्थिक प्रशासन एवं वित्तीय प्रबन्ध विभाग
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
टोंक (राजस्थान)-304001

वनों का महत्व अब गांव वालों की समझ में आया

अशोक कुमार यादव

वनों से क्या-क्या फायदे हैं और वन ग्रामीणों के लिए कितने मददगार सिद्ध हो रहे हैं, यह बात अब चितौड़गढ़ जिले के कपासन वन क्षेत्र के ग्रामीणों के गले उतर गयी है और वे वनों का महत्व समझने लगे हैं। हिंगोरिया ग्राम पंचायत ने वर्ष 1984 में जब पहली बार अपनी पड़त चरनोद भूमि को वन विकास कार्य हेतु वन विभाग को दिया तो ग्रामीणों ने इस बात का तीव्र विरोध किया और सरपंच श्री प्यारेलाल वर्मा सहित ग्राम पंचायत कार्यकर्ताओं को भला बुरा कहा। लेकिन एक वर्ष बाद ही वह पथरीली भूमि वन लगाने से हरी-भरी नजर आने लगी और ग्रामीणों को मुफ्त में चारा मिलने लगा तो वे बहुत ही खुश हुए और पछतावा करने लगे कि ग्राम पंचायत को हमने गलत बदनाम किया।

उल्लेखनीय है कि मिश्रित वृक्षारोपण योजना के अन्तर्गत हिंगोरिया ग्राम पंचायत में वर्ष 1984 में 20 हैक्टेयर, 1985 में 15 हैक्टेयर तथा 1986 में 20 हैक्टेयर, कुल 55 हैक्टेयर चरनोट भूमि पर वृक्षारोपण कार्य कराया गया है। वन विकास के लिए 5 वर्ष के लिए वन विभाग द्वारा लीज पर ली गयी इस भूमि पर लगाये गये पौधों में से 90 से 95 प्रतिशत पौधे जीवित हैं और प्रति वर्ष तीन से दस फीट की उंचाई में इनकी वृद्धि हो रही है। ग्राम पंचायत के लोगों को खाने के लिए बेर मिल रहे हैं वहीं हिंगोरिया ग्राम पंचायत के इस नये वन क्षेत्र से इस वर्ष 20 बोरी 'धामण' किस्म के चारे के बीज एकत्रित किये गये हैं जो किसानों को अपने खेत के चारों और बोने के लिए मुफ्त में वितरित किये जायेंगे। वन विकास के इन प्रयासों से ग्रामीणों में वन लगाने व इनकी रक्षा करने के लिए चेतना तो जगृत हुई ही है लेकिन ग्रामीणों के मानस पटल पर यह बात अब पूरी तरह जम गयी है कि वन आय के स्रोत ही नहीं बल्कि इन्द्र देव को बुलाने वाले दूत भी हैं।

कपासन वन क्षेत्र में हिंगोरिया ग्राम पंचायत का अनुकरण करके नारेला, बनाकिया, निम्बाहेड़ा, नेतावल आदि ग्राम पंचायतें भी मिश्रित वृक्षारोपण योजना में आगे आयी हैं। इन क्षेत्रों की पथरीली भूमि पर वर्ष 1984 से पहले जहां इक्के दुक्के वृक्ष नजर आते थे वहां अब क्षेत्र विशेष में हरियाली नजर आने लगी है। यही नहीं विशेष क्षेत्र के अलावा भी ग्रामीणों ने बड़े पैमाने पर जगह-जगह पौधे लगाये हैं। वृक्ष के साथ ही वन विभाग ने सड़क व रेल मार्गों के सहारे-सहारे भी वृक्ष लगवाये हैं। पर्यावरण संतुलन को बनाये रखने तथा वन विकास कार्यों के प्रति ग्रामीणों के बढ़ते हुए रुझान के कारण ही अब गांवों में वन विभाग के अधिकारियों एवं कर्मचारियों को भरपूर सहयोग मिलता है। इन गांवों के लोग अब वृक्षों को नष्ट नहीं करने देते बल्कि वे यह देखते हैं कि कोई वृक्ष तो नहीं काट रहा है।

नारेला ग्राम पंचायत में सड़क के किनारे 10 हैक्टेयर क्षेत्र में वर्ष 1984 से किये जा रहे वन विकास कार्य के बारे में मण्डल वन अधिकारी ने बताया कि इसमें 24 हजार पौधे लगाये गये जिनमें से 99 प्रतिशत पौधे अब भी जीवित हैं। पांच वर्ष तक वन विकास कार्य करके वन विभाग इस भूमि को वापस ग्राम पंचायत को सौंप देगा। इस भूमि पर पैदा होने वाले चारे के लिए ग्राम पंचायत घास डिपो बना सकेगी और उससे किसानों को आसानी से घास उपलब्ध हो सकेगा। इसके साथ ही ईंधन हेतु लकड़ी भी मिलेगी और ग्राम पंचायत की आय में वृद्धि हो सकेगी। उल्लेखनीय है कि गत वर्ष इस नारेला वन क्षेत्र में घास के चार हजार पूले तैयार किये गये।

बनाकिया ग्राम पंचायत क्षेत्र में 50 हैक्टेयर क्षेत्र के चारों और खाई खुदवाकर वन क्षेत्र की सुरक्षा के लिए बीजरोपण विधि से बाड़ तैयार करायी गयी है। कपासन में वन विभाग की पौधशाला में इस वर्ष विभिन्न प्रजातियों के दो लाख 51 हजार पौधे तैयार करके उन्हें सरकारी अर्द्धसरकारी, स्वयं सेवी एवं निजी संस्थाओं व किसानों को वितरित कराया गया।

उबड़-खाबड़ एवं पथरीली जमीन जिसमें वृक्ष तो क्या चारा भी अच्छी तरह से पैदा नहीं हो सकता लेकिन ग्राम

(शेष पृष्ठ 9 पर)

भीलवाड़ा जिले में फलता-फूलता "भेड़ पालन व्यवसाय"

श्याम सुन्दर जोशी

प्रसन्न मुद्रा में खड़े हैं, भेड़पालक

देश के भेड़पालन व्यवसाय में राजस्थान का अपना एक खास स्थान है। पश्चिमी राजस्थान में जहां विशेष तौर से भेड़ पालन ही जीविकोपार्जन का मुख्य साधन है वहीं दक्षिणी सम्भाग में कृषि के साथ-साथ भेड़पालन पिछड़े व गरीब तबके की आर्थिक आय में वृद्धि का प्रमुख स्रोत है।

एक अनुमान के अनुसार राज्य में लगभग एक करोड़ पचास लाख भेड़ें हैं जिनसे प्राप्त होने वाली ऊन, मांस एवं चमड़े से हर वर्ष लाखों रुपयों की आय हो रही है।

राज्य के अन्य जिलों की भांति भीलवाड़ा जिले में भी यह व्यवसाय दिन दूनी और राज चोगुनी गति से फल-फूल रहा है। जिले में करीबन बारह लाख से अधिक भेडें हैं जिन्हें पाल पोसकर हजारों काश्तकार अतिरिक्त आर्थिक लाभ प्राप्त कर रहे हैं। कई व्यक्ति इनसे सम्बन्धित विभिन्न प्रकार के रोजगारों से भी जुड़े हुए हैं। जिनमें अनुसूचित जाति व अनुसूचित जन-जाति के लोग बड़ी संख्या में हैं।

भेड़पालकों को नवीनतम वैज्ञानिक तकनीक से अवगत कराने, भेड़ों के लिए स्वास्थ्य एवं चिकित्सा सेवाएं उपलब्ध कराकर उनकी मृत्यु दर कम करने, भेड़ों से प्राप्त होने वाली

ऊन की किस्म सुधारने एवं उनकी मात्रा बढ़ाने तथा गरीबी की सीमा रेखा से नीचे जीवनयापन कर रहे परिवारों की आर्थिक समृद्धि हेतु उन्हें भेड़ इकाइयां उपलब्ध कराने के लिए भेड़ व ऊन विभाग द्वारा जिले में विभिन्न कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं।

प्रसार कार्य: जिला मुख्यालय पर स्थापित सहायक निदेशक कार्यालय के अधीन पंचायत समिति स्तर पर सात कृत्रिम गर्भाधान प्रसार केन्द्र एवं छः भेड़ व ऊन प्रसार केन्द्र कार्यरत हैं। साथ ही ग्रामीण स्तर पर भेड़ व ऊन प्रसार उप-केन्द्र भी खोले गये हैं जो निरन्तर जिले में भेड़पालन व्यवसाय की वृद्धि एवं प्रगति के लिए प्रयत्नशील हैं।

प्रत्येक प्रसार केन्द्र पर एक-एक प्रसार अधिकारी और दो से छः स्कन्ध सहायक होते हैं जो भेड़ पालकों से निरन्तर सम्पर्क बनाये रखकर उन्हें उन्नत भेड़ पालन की सलाह देने के अतिरिक्त उनकी कठिनाइयों का निराकरण करने के साथ भेड़ों की स्वास्थ्य रक्षा हेतु समय पर आवश्यक साधन सुविधाएं भी मुहैया कराते हैं।

संकर प्रजनन: भीलवाड़ा जिले में सोनाड़ी व मालपुरा नस्ल की भेड़ें सर्वाधिक पाई जाती हैं। देशी भेड़ों की नस्ल सुधार कर उनकी ऊन व मांस उत्पादन क्षमता में वृद्धि करने के लिए विभाग द्वारा संकर प्रजनन कार्यक्रम चलाया जा रहा है।

देशी भेड़ों में ऊन की औसत उत्पादन पौन किलोग्राम से सवा किलोग्राम होता है जबकि संकर नस्ल की भेड़ में यही उत्पादन दो किलों से ढ़ाई किलो तक होता है। मालपुरा व सोनाड़ी भेड़ों में संकर प्रजनन करके गलीचा बनाने योग्य ऊन उत्पादन किया जा सकता है यही नहीं देशी भेड़ों के आठ से बारह माह की उम्र के मेमनों का वजन भी जहां औसतन 18 से 20 किलोग्राम होता है वहीं इसी उम्र के संकर भेड़ों का वजन 20 से 30 किलोग्राम तक होता है।

संकर प्रजनन योजना के तहत प्रगतिशील भेड़ पालकों को संकर नस्ल के भेड़ें रियायती दरों पर प्रजनन हेतु उपलब्ध कराये जाते हैं। जिसमें अनुसूचित जाति और जन-जाति के भेड़पालकों को प्राथमिकता दी जाती है। संकर नस्ल के मेंढ़े

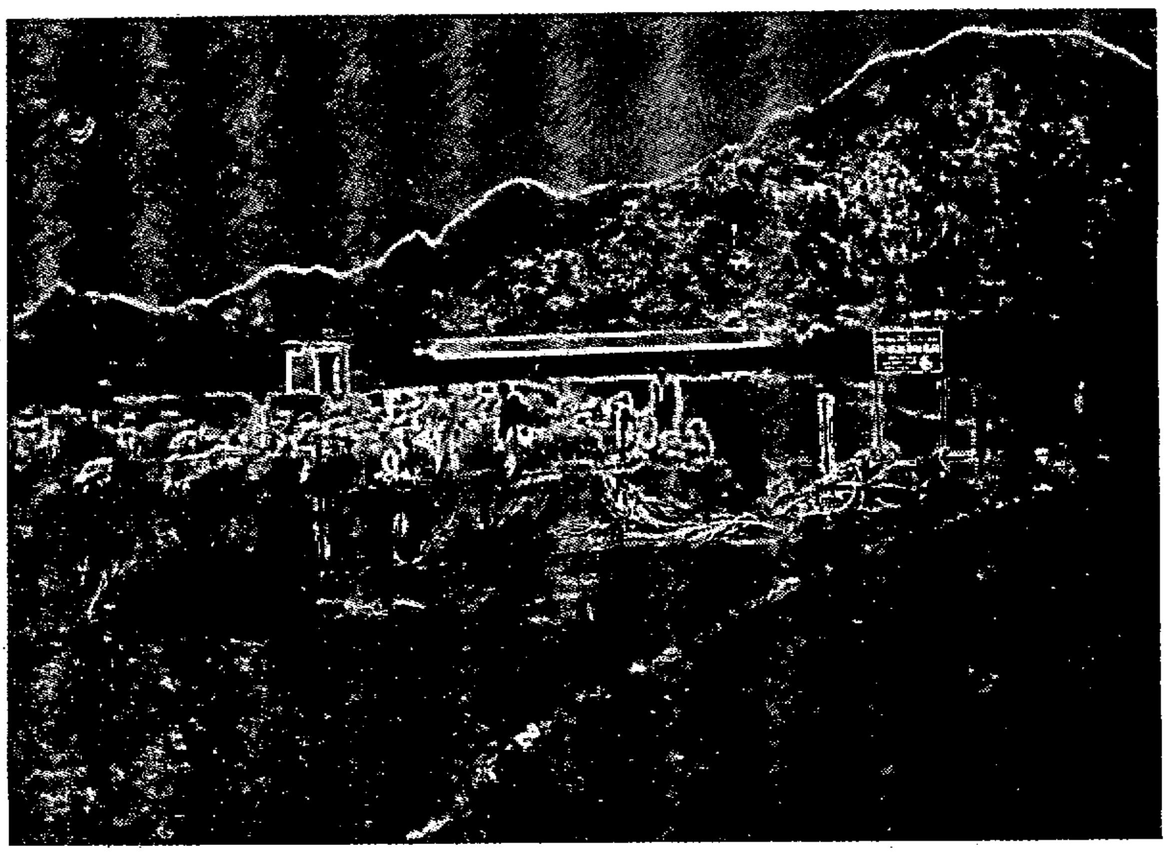

भेड़ चारागाह विकास केन्द्र

विदेशी नस्ल की भेड़ें

रेवड़ में प्रयोग करने से एक चौथाई विदेशी खून वाले पशु पैदा होते हैं। ये देशी भेड़ से अधिक मात्रा में अच्छी ऊन देते हैं साथ ही इन में संक्रामक रोगों का प्रभाव भी बहुत कम होता है।

भीलवाड़ा जिले में गत वित्तीय वर्ष के दौरान भेड़ों में नस्ल सुधार हेतु 2,744 भेड़ों को विदेशी भेड़ों से एवं 6,844 भेड़ों को पचास प्रतिशत संकर मेंढ़ों से गर्भित कराया जिससे 5,552 संकर सन्तति उत्पन्न हुई। इसके अतिरिक्त 762 डाकब्रेक भेड़ें संकर प्रजनन हेतु भेड़ पालकों को वितरित किये गये। मिनी फार्म योजना के अन्तर्गत भेड़ पालकों से चार से छः माह की उम्र के 191 संकर नर मेमने अच्छी कीमत देकर क्रय किये गये जिन्हें व्यस्क होने तक पाला जाकर पुनः संकर प्रजनन हेतु भेड़ पालकों को रियायती दर पर वितरित कर दिये जायेंगे।

भेड़ों को विभिन्न संक्रामक रोगों से बचाने तथा उनके स्वास्थ्य की पूर्ण देखभाल के लिए विभाग द्वारा किये जा रहे प्रयासों के अन्तर्गत आलोच्य वर्ष में जिले की 1,79,742 भेड़ों को टीके लगाये गये। 5,42,204 भेड़ों की आन्तरिक परजीवियों से रक्षा तथा 3,57,227 भेड़ों में बाल्य परजीवियों व कीटाणुओं से बचाव हेतु उन्हें क्रमिनाशक दवा पिलाई गई एवं दवा का छिड़काव किया गया। इसके अलावा 43,223 नकारा भेड़ों व नर मेमनों का बधियाकरण तथा 52,116 भेड़ों का सामान्य उपचार किया गया। ग्रामीण स्तर पर भेड़ पालकों को प्रसार सेवाएं उपलब्ध कराने के लिये जिले में 223 विशेष एक-एक दिवसीय शिविर लगाये गये जिनमें 43,690 भेड़ पालकों को लाभान्वित किया गया।

भेड़ पालकों को भेड़ पालन का प्रशिक्षण प्रदान करने हेतु गत वित्तीय वर्ष में जिले के आसीन्ड, शाहपुरा, माण्डलगढ़, गंगापुर, जहाजपुर एवं रायपुर क्षेत्र में चार दिवसीय तथा जिला मुख्यालय पर एक तीन दिवसीय जिला स्तरीय प्रशिक्षण शिविर आयोजित कर 300 से अधिक भेड़ पालकों को

लाभान्वित किया गया।

निष्क्रमणार्थी भेड़ों की देखभाल

भीलवाड़ा जिले से गुजरती हुई लाखों भेड़ें प्रति वर्ष चारा-पानी की तलाश में पड़ौसी राज्यों में निष्क्रमण कर जाती हैं। अकाल के समय इनकी संख्या और भी बढ़ जाती है। आलोच्य अवधि में इस जिले से 4,62,071 का पड़ौसी राज्य मध्यप्रदेश में निष्क्रमण हुआ।

अन्य जिलों की भेड़ें जब इस जिले से होकर गुजरती हैं तो स्थानीय कास्तकारों को कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इस प्रक्रिया से होने वाली कठिनाइयों को दूर करने एवं निष्क्रमण पर जाने वाले भेड़ पालकों को सही दिशा निर्देश देने के लिए स्थानीय जिला प्रशासन के सहयोग से पन्द्रह चैक पोस्टें कायम कर निष्क्रामणित भेड़ों के मालिकों को गन्तव्य स्थान तक पहुंचाने के लिए उचित मार्गदर्शन प्रदान किया गया व भेड़ों की रेवड़ों में आवश्यकतानुसार चिकित्सा सेवांए भी सुलभ कराई गईं।

इस तरह भेड़ पालकों के आर्थिक उन्नयन हेतु भीलवाड़ा जिले में चलाई जा रही विभिन्न गतिविधियों, सेवा सुविधाओं से उन्हें हर सम्भव सहायता उपलब्ध करा कर लाभान्वित किया जा रहा है।

द्वारा—राम लाल टेलर
182, वकील कालोनी, भीलवाड़ा
पिन. 311001 (राजस्थान)

(पृष्ठ 5 का शेष)

पंचायत के सरपंच श्री प्यारेलाल वर्मा ने उत्साह दिखाया और वे जीजान से अपनी ग्राम पंचायत को हरा-भरा बनाने में जुट गये। मिश्रित वृक्षारोपण योजना के लिए उन्होने ही सबसे पहले वन विभाग को भूमि उपलब्ध करायी। हिंगोरिया वन क्षेत्र के पड़ाव में सरपंच साहब बोले "वन लगाने के इस सदप्रयास को गांव वालें ने पहले गलत समझा और उन्होंने मुझे प्रताड़ित किया लेकिन आज स्थिति यह है कि वे स्वयं झुण्डों में इन वन क्षेत्रों में आते हैं और पेड़ो को बढ़ते हुए देख खुश होते हैं।" सरपंच साहब कहने लगे कि कपासन क्षेत्र में जलस्तर बहुत नीचा है, वर्षा भी कम होती है परन्तु यह सोचकर कि वन लगाये जायें तो यह समस्या भी दूर हो सकती है और मैंने यही किया। आज हिंगोरिया ग्राम पंचायत चारे के मामले में आत्मनिर्भर हो गयी है। उनकी ग्राम पंचायत के पशुपालकों को अकाल के बावजूद इधर-उधर चारे के लिए भटकना नहीं पड़ता है।

कपासन के क्षेत्रीय वन अधिकारी, श्री योगेन्द्र सिंह को जिला स्तर पर गत 15 अगस्त को इसीलिए पुरस्कृत किया गया, क्योंकि उन्होंने अपने क्षेत्र में सामाजिक वानिकी कार्यक्रम में श्रेष्ठ कार्य किया। विश्व बैंक के अधिकारी पिछले डेढ़ माह पूर्व कपासन क्षेत्र में किये गये वृक्षारोपण कार्यों को देखने के लिए आये तो वे बहुत प्रभावित हुए और कहने लगे कि उबड़-खाबड़ जमीन पर वृक्षारोपण राजस्थान में यहीं अधिक सफल हुआ है।

उल्लेखनीय है कि कपासन वन क्षेत्र में पिछले तीन वर्षों में सड़क के दोनों किनारों पर 300 किलोमीटर में तथा रेल लाइन के दोनों किनारों पर 140 किलोमीटर में वृक्षारोपण कार्य कराया गया है। बंजर भूमि विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत वन विभाग ने 70 व्यक्तियों को 25 हैक्टेयर बंजर भूमि में वृक्ष लगाने के लिए 41 हजार पौधे वितरित किये हैं वहीं मिश्रित वृक्षारोपण कार्यक्रम के अन्तर्गत 417 बेर के पौधे लगाये गये हैं। इसके अलावा वन विभाग ने अपनी 55 हैक्टेयर बंजर भूमि पर वन लगाने का बीड़ा हाथ में लिया है। कपासन वन क्षेत्र में गत वर्ष 5 किसान पौधशाला तथा सिंहपुर गांव में स्कूल पौधशाला लगवायी जहां क्रमशः 2 लाख 15 हजार तथा 10 हजार पौधे तैयार कराये गये।

सी-60 प्रताप नगर
चित्तौड़गढ़

पिछड़े वर्गों का उत्थानः समस्या और समाधान

अतुल माथुर

विश्व में मानव-मानव के प्रति समानता, सहिष्णुता और बन्धुत्व की बातें हर महान व्यक्ति ने कही हैं और प्रत्येक धर्म ग्रंथ में भी ऐसी ही शिक्षा दी गई है, किन्तु यथार्थ में स्थिति विपरीत ही दिखाई देती है।

एक बार राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने कहा था, "मैं एक ऐसे भारत वर्ष के लिए काम करूंगा जिसमें सबसे निर्धन व्यक्ति भी ये अनुभव करे कि यह उसका देश है और इसे बनाने में उसका प्रभावशाली योगदान है। जिसमें कोई ऊंचा या नीचा वर्ग नहीं होगा, जिसमें सारी जातियां पूर्ण सद्भाव के साथ रह सकें।" भारतीय संविधान में भी यही कल्पना मूर्त हुई है जिसका उद्देश्य है भारत के हर नागरिक को सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय दिलाना।

भारत में तीन हजार से अधिक जातियां व उपजातियां निवास करती हैं। विभिन्न जातियों में भी ऊंच-नीच की स्थिति विद्यमान है।

हम अगर अपने देश के जीवन स्तर का विश्लेषण करें तो पायेंगे कि हमारे देश की जनसंख्या का एक बहुत बड़ा भाग निर्धनता की रेखा से नीचे जीवन यापन करता है। ये समुदाय मुख्यतः तीन भागों में बाँटे जा सकते हैं-अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और अन्य पिछड़े वर्ग।

कुछ वर्ष पूर्व तक अनुसूचित जाति के लोगों को अछूत, नीच और परित्यक्त की संज्ञा दी जाती थी। गांधीजी ने इसका विरोध किया और उन्हें नाम दिया 'हरिजन' अर्थात हरि के जन। भारत की जनसंख्या का कुल 15 प्रतिशत से भी अधिक भाग अनुसूचित जाति से संबंधित है। ये पूरे देश में विभिन्न राज्यों में बसे हुए हैं और इस समुदाय का लगभग 90 प्रतिशत भाग गांवों में बसता है। किन्तु गुजरात और महाराष्ट्र में शहरी जनसंख्या का एक बहुत बड़ा भाग इसी समुदाय का है।

हमारे देश के इतिहास में अस्पृश्यता की बुराई का अनेक सामाजिक व धार्मिक सुधारकों ने विरोध किया है परन्तु पिछड़ेपन से लड़ने और हरिजनों के उत्थान को एक राष्ट्रीय आन्दोलन बनाया महात्मा गांधी ने।

इसकी एक महत्वपूर्ण घटना थी - सन् 1932 में महात्मा गांधी द्वारा किया गया अनशन। ये था ब्रिटिश सरकार की साम्प्रदायिक नीति के विरोध में। जिसमें उन्होंने पिछड़े वर्गों का एक अलग निर्वाचक मंडल बना दिया था। इस में गांधीजी को सफलता भी मिली।

15 अगस्त 1947 को भारत स्वतंत्र हुआ और 26 जनवरी 1950 को गणतंत्र यानि इस दिन हमारा संविधान लागू किया गया।

संविधान के अनुच्छेद 341 और 342 के उपबन्धों के अन्तर्गत राष्ट्रपति द्वारा जारी किये गये प्रन्द्रह आदेशों द्वारा अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों का अलग-अलग उल्लेख किया गया है।

सन् 1981 की जनगणना के अनुसार देश की कुल जनसंख्या में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की जनसंख्या लगभग 23.51 प्रतिशत थी। इसके अतिरिक्त कुछ राज्य सरकारों ने "अन्य पिछड़े वर्गों" के नाम से अन्य वर्गों के लोगों तथा अर्ध खाना बदोश समुदायों का उल्लेख किया है।

संविधान में अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और अन्य कमजोर वर्गों का शैक्षिक तथा आर्थिक दृष्टि से उत्थान करने और उनकी सामाजिक असमर्थताओं को दूर करने के लिए उन्हें सुरक्षा तथा संरक्षण प्रदान करने की व्यवस्था की गई है। इनमें कुछ मुख्य व्यवस्थाएं हैं:-

1- अस्पृश्यता का उन्मूलन तथा इसके किसी भी रूप में प्रचलन का निषेध। (अनुच्छेद-17)

2- इन जातियों के शैक्षिक और आर्थिक हितों की रक्षा और उनका सभी प्रकार के शोषण तथा सामाजिक अन्याय से बचाव। (अनुच्छेद-46)

3- अनुसूचित जातियों को 25 जनवरी 1990 तक लोक सभा और विधान सभाओंमें विशेष प्रतिनिधित्व देना। (अनुच्छेद-330, 332 और 339)

4 अनुसूचित और जन जातीय क्षेत्रों के प्रशासन और नियंत्रण के लिए विशेष अनुबन्ध। (अनुच्छेद 244 तथा पंचम और षष्ठ अनुसूची)

5- मानव के देह व्यापार तथा जबरदस्ती किये गये श्रम का निषेध (अनुच्छेद-23)

हमारे संविधान में राजकीय नीति के निर्देशक सिद्धांतों का भी समावेश किया गया है। जिनके अनुसार राज्य विशेष सतर्कता के साथ पिछड़े वर्गों के शैक्षिक एवं आर्थिक विकास के लिए कार्य करता है। इसके अनुच्छेद 17 के अनुसार, अस्पृश्यता समाप्त कर दी गई है और किसी भी रूप में इसका चलन निषेध है।

भारत सरकार का गृह मंत्रालय अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जन जातियों के विकास कार्यक्रमों की समग्र नीति बनाने, उनकी आयोजना तथा समन्वय करने के लिए प्रमुख मंत्रालय है। ये केन्द्रीय मंत्रालयों तथा राज्य सरकारों के साथ सम्पर्क बनाए रखता है।

यद्यपि भारत के संविधान में इन श्रेणियों के लिए सुरक्षा उपायों की व्यवस्था की गई है फिर भी पंचवर्षीय योजनाओं में इन जातियों के उत्थान को राष्ट्रीय नीति का एक मुख्य लक्ष्य माना गया।

प्रत्येक पंचवर्षीय योजना में पिछड़े वर्ग के उत्थान में किया गया व्यय इस प्रकार था:

पंचवर्षीय योजना	वर्ष	व्यय (करोड़ रु. में)
प्रथम	1951-56	30.04
दूसरी	1956-61	79.41
तीसरी	1961-66	100.00
तीन वार्षिक योजनाएं	1966-69	68.50
चौथी	1969-74	172.70
पांचवीं	1974-79	296.19

अस्पृश्यता की बुराई को जड़ मूल से समाप्त करने के लिए सन् 1955 से पूर्व कई राज्यों ने कानून बना लिए थे किन्तु सभी के विधान भिन्न थे। इसलिये 1955 में केन्द्र सरकार ने राष्ट्रीय स्तर पर कानून बनाये।

इसी अस्पृश्यता कानून को और अधिक व्यापक बनाने तथा इसके दण्ड सम्बन्धी उपबन्धों को और कठोर बनाने के लिए अस्पृश्यता (अपराध) संशोधन तथा प्रकीर्ण उपबन्ध अधिनियम 1976 द्वारा, जो कि 19 नवम्बर 1976 को लागू हुआ था अस्पृश्यता (अपराध) अधिनियम 1955 में व्यापक रूप से संशोधन किया गया, और मूल अधिनियम का नाम बदल कर "नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम 1955" रख दिया गया। इस अधिनियम में किसी व्यक्ति को अस्पृश्यता के आधार पर प्रयोग करने से रोकने के लिए दण्ड देने की व्यवस्था है।

भारत एक प्रभुसत्ता सम्पन्न प्रजातांत्रिक गणतंत्र है जिसमें हर वयस्क व्यक्ति को वे किसी भी जाति, धर्म, सम्प्रदाय का हो, उसे संसद और राज्यों की विधान सभाओं के लिए भी अपना मत देने और चुनाव लड़ने का पूरा अधिकार है।

इस समानता को वास्तविक रूप देने के लिए 26 जनवरी 1950 से बीस वर्षों के लिए लोक सभा व राज्य विधान सभाओं के कुछ स्थान पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षित किये गये, जबकि इन वर्गों के लोग अन्य सामान्य सीटों के लिए भी चुनाव लड़ सकते हैं। सन् 1962 के आम चुनावों में कुल 500 लोक सभा की सीटों में से 76 अनुसूचित जातियों और 31 अनुसूचित जन जातियों के लिए आरक्षित थीं। विधान सभाओं में 3177 सीटों में से 470 अनुसूचित जातियों और 221 अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित थीं। इसके अतिरिक्त स्थानीय स्वशासन में भी इस वर्ग के लिए आरक्षण का प्रावधान किया गया।

अनुच्छेद 330 और 332 के अन्तर्गत किये गये ये आरक्षण जो कुछ बीस वर्ष के लिए किये गये थे, अब 25 जनवरी 1990 तक बढ़ा दिये गये हैं।

इन आरक्षणों की वर्तमान स्थिति इस प्रकार है:-

	आरक्षण		
	कुल सीटें	अनुसूचित जाति	जनजाति
लोक सभा	542	79	40
विधान सभाएं	3997	557	315

स्वतंत्रता प्राप्ति के फौरन बाद अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जन जातियों के लिए सरकारी सेवाओं में आरक्षण बढ़ा दिया गया। अखिल भारतीय स्तर पर होने वाली खुली प्रतियोगिता के द्वारा भर्ती वाले पदों के लिए 12.5 प्रतिशत व अन्य तरीके से होने वाली भर्तियों में 16.66 प्रतिशत स्थान अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षित कर दिये गये। स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व ये आरक्षण मात्र 8.33 प्रतिशत थे। अनुसूचित जनजातियों के लिए 5 प्रतिशत आरक्षण किया गया जबकि स्वतंत्रता से पूर्व यह शून्य था। इसके फलस्वरूप केन्द्रीय सेवाओं में पिछड़े वर्गों के लोगों की संख्या जो जनवरी 1955 में 1,77,000 थी, जनवरी 1961 में बढ़कर 3,20,000 हो गई।

इस समय अखिल भारतीय आधार पर होने वाली खुली प्रतियोगिता के द्वारा जिन पदों पर भर्ती की जाती है उनमें अनुसूचित जातियों के लिए 15 प्रतिशत और अखिल भारतीय स्तर पर अन्य तरीके से होने वाली भर्तियों पर 16.66 प्रतिशत स्थान आरक्षित हैं। दोनों मामलों में अनुसूचित जन जातियों के लिए 7.5 प्रतिशत स्थान आरक्षित हैं।

पिछड़े वर्गों के उन अधिकारियों को जो **वरिष्ठता के** आधार पर विचार किये जाने योग्य हैं और जो पदोन्नति के लिए रिक्त स्थानों की निर्धारित संख्या के अन्दर आते हैं पदोन्नति के लिए उपयुक्त पाये जाने पर चयन सूची में सम्मिलित कर लिए जाते हैं।

इन जातियों को पर्याप्त प्रतिनिधित्व देने की दृष्टि से आयु और योग्यता संबंधी कुछ रियायतें दी जाती हैं।

केन्द्र सरकार की सेवाओं में 1 जनवरी 1983 की स्थिति के अनुसार अनुसूचित जाति व जनजाति के प्रतिनिधित्व का ब्यौरा निम्न है-

समूह (श्रेणी)	कर्मचारी संख्या	अनुसूचित जाति	कुल संख्या का प्रतिशत	जन जाति	कुल संख्या का प्रतिशत
क (प्रथम)	53165	3574	6.62	761	1.43
ख (द्वितीय)	62600	6368	10.17	922	1.47
ग (तृतीय)	2128746	311070	14.61	88149	4.14
घ (चतुर्थ) (मेहतरों को छोड़ कर)	1303005	255053	10.57	71812	5.51
कुल योग	3547516	576065	16.24	161644	4.56

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत सरकार ने युद्ध स्तर पर पिछड़े वर्गों को शिक्षित करने का कार्य प्रारंभ कर दिया। राज्यों को शिक्षा सुविधाएं बढ़ाये जाने के निर्देश दिये गये। विद्यार्थियों को उनकी मासिक फीस में छूट दी गई, छात्रवृत्तियां प्रदान की गई, किताबें व अन्य चीजें मुफ्त प्रदान की गईं। इस कारण पिछड़े वर्गों में शिक्षित लोगों की संख्या धीरे-धीरे बढ़ती जा रही है।

नई शिक्षा नीति पिछड़े वर्ग के लिए एक अत्यन्त महत्वाकांक्षी योजना है। इसके अन्तर्गत पिछड़े वर्ग के लोगों को अधिक शिक्षण सुविधाएं दी जायेंगी। उन्हें व्यवसायिक शिक्षा दी जायेगी जिससे वो स्वयं अपना व्यवसाय खोल कर अच्छी तरह जीवन यापन कर सकें।

स्त्री शिक्षा को विशेष महत्व दिया जा रहा है- जिससे वे भी देश के विकास में अपना महत्वपूर्ण योगदान दे सकें।

वयस्क शिक्षा के कार्यक्रम को और व्यापक बनाया जा रहा है जिससे पिछड़े वर्ग के लोग अधिक साक्षर हो सकें।

अनुसूचित जन जातियों में शिक्षा का प्रचार व प्रसार उनकी संस्कृति को बिना मिटाये करने की योजना है।

भारत की पिछड़ी जातियों का एक बहुत बड़ा भाग कृषि पर निर्भर है। उनकी आर्थिक स्थिति का विकास तभी हो सकेगा जब भारत में कृषि का विकास हो। इन लोगों का एक बहुत बड़ा हिस्सा आजादी तक बंधुआ मजदूर के रूप में या भूमिहीन मजदूर के रूप में कार्य कर रहे थे। उनका आर्थिक, सामाजिक शोषण एक आम बात थी। अब कानूनी तौर पर बंधुआ मजदूरी समाप्त कर दी गई है।

जन जागृति में रेडियो और टेलीविजन का बहुत बड़ा योगदान होता है। इसलिये इनका प्रसार व्यापक रूप से किया जा रहा है। शिक्षा संबंधी, मनोरंजन, साम्प्रदायिक एकता आदि अनेक प्रकार के कार्यक्रम प्रसारित किये जाते हैं। योजना है कि सन् 1990 तक हमारे देश की 70 प्रतिशत जनता तक टेलीविजन व 90 प्रतिशत जनता तक रेडियो सुविधाएं उपलब्ध करा दी जायेंगी।

जुलाई 1978 में अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों के लिए एक आयोग का गठन किया गया इसमें एक अध्यक्ष व चार सदस्य थे। आयोग का कार्य संवैधानिक संरक्षणों, सरकारी सेवाओं में आरक्षण से संबंधित सभी मामलों की जांच पड़ताल तथा अस्पृश्यता को समाप्त करने के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम 1955 के क्रियान्वयन के बारे में अध्ययन करना है।

संवैधानिक संरक्षणों के क्रियान्वयन की जांच के लिए तीन संसदीय समितियां भारत सरकार ने गठित की – पहली 1968 में दूसरी 1971 में और तीसरी 1973 में।

अनुसूचित जातियों के विकास के लिए तीन सूत्रीय कार्यक्रम तैयार किया गया है-

1- केन्द्रीय मंत्रालयों तथा राज्यों को विशेष संघटक योजनाएं। छठी योजनावधि में इसके लिए 4481.91 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया था।

2- राज्यों की अनुसूचित जातियों की विशेष संघटक योजनाओं के लिए केन्द्रीय सहायता।

3- राज्यों में अनुसूचित जाति विकास निगम। ये निगम 17 राज्यों तथा दो केन्द्र शासित प्रदेशों दिल्ली व चण्डीगढ़ में खोले गये हैं।

71-सी. हिमाँयु पुर, सफदरजंग एनक्लेव,
नई दिल्ली-29

ग्रामीण आर्थिक विकास

श्रीकान्त यादव

भारत में विभिन्न योजनाओं के द्वारा ग्रामीण आर्थिक विकास के लिये योजनाबद्ध प्रयास प्रारम्भ किया गया। अनेक ऐसे कार्यक्रम अपनाये गये जिससे ग्रामीण आर्थिक विकास प्रारम्भ हो गया। लेकिन समस्यायें जटिल हैं, निरन्तर प्रयास जारी है।

कृषि विकास के फलस्वरूप ही हम खाद्यान्नों के मामले में पूर्णतः आत्मनिर्भर हो पाये हैं, जो ग्रामीण आर्थिक विकास का महत्वपूर्ण पहलू है किन्तु इसमें बैंकों और लघु उद्योगों की भूमिका भी सराहनीय रही है।

बैंकों की भूमिका

ग्रामीण क्षेत्रों में वित्तीय सुविधा प्रदान करने के लिये जुलाई 1969 में 14 बड़े बैंको का राष्ट्रीयकरण और 15 अप्रैल 1980 को छः और बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया गया। भारत सरकार का ख्याल है कि राष्ट्रीयकृत बैंक अर्थव्यवस्था को गत्यात्मक बना देंगे और देश में ग्रामीण आर्थिक विकास की दर को त्वरित करने में सहायता देंगे। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये ग्रामय स्थित छोटे उद्योगों और किसानों को ऋण देने के लिए कई कार्य प्रारम्भ किये हैं।

ग्रामीण आर्थिक विकास को त्वरित करने के लिए अन्य बैंक योजना प्रारम्भ की गई तथा शाखा का विस्तार किया गया।

तालिका : बैंक राष्ट्रीयकरण के पश्चात्
सभी बैंकों का शाखा विस्तार

	19.7.69	30.6.1984
1. कुल शाखाओं की संख्या	8321	45,330
2. ग्रामीण शाखायें	1858	23,540
3. कुल के प्रतिशत के रूप में ग्रामीण शाखायें	22	64
4. जनसंख्या प्रति बैंक दफ्तर	65,000	15,000

तालिका से स्पष्ट है कि जुलाई 1969 में हुये बैंक राष्ट्रीयकरण के पांच वर्षों के अन्दर बैंक शाखाओं की संख्या में 155 प्रतिशत से भी अधिक की वृद्धि हुई परन्तु सबसे अधिक असाधारण प्रगति ग्राम केन्द्रों के रूप में हुई जिनकी संख्या जुलाई 1969 में 1858 से बढ़कर जून 1984 के अन्त तक 23,540 बैंक-दफ्तर हो गई। 1969 में 65,000 जनसंख्या के लिए एक बैंक-दफ्तर था, 1973 में 36,000 जनसंख्या के लिए और 1984 में 15,000 जनसंख्या के लिए एक बैंक-दफ्तर कायम हो गया। 83 प्रतिशत ग्रामों की जनसंख्या 1,000 से कम है और इस कारण प्रत्येक ग्रामों में शाखा खोलना सम्भव नहीं।

अतः एक ग्राम बैंक 16 किलोमीटर के घेरे के अन्दर सभी ग्रामों को सेवा उपलब्ध कराता है। कुछ बैंकों ने तो चलते-फिरते दफ्तर भी कायम किये हैं। आज भारत के 5.6 लाख ग्रामों में से प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से केवल 23,540 ग्रामों में बैंक सेवायें उपलब्ध हैं। सरकारी क्षेत्र के अधीन दिये गये कुल उधार में कृषि अग्रिमों का भाग जून 1969 में 5.5 प्रतिशत था जो धीरे-धीरे बढ़ता हुआ मार्च 1982 में 16 प्रतिशत हो गया।

वाणिज्य बैंकों के अतिरिक्त कृषि कार्यों में वित्तीय सुविधा प्रदान करने के लिए नाबार्ड और क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की स्थापना की गई है जो समय-समय पर कृषकों को कृषि के कार्यों के लिये वित्तीय सुविधा प्रदान करती हैं।

लघु उद्योगों की भूमिका

ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के सीमित अवसरों के दूर करने के लिए ग्रामीण औद्योगिकरण ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। प्रथमतः पूर्व स्थापिल ग्रामीण उद्योगों का विकास किया गया, यथा भेड़ पालन हस्त कौशल पर आधारित उद्योग, कालीन तथा दरी बुनना, रस्सी बांटना आदि। द्वितीय बड़े कारखानों का नगरीय केन्द्रों से ग्रामीण क्षेत्रों की ओर स्थानान्तरण किया गया।

भारत में योजनावधि के अन्तर्गत लघु उद्योगों के विकास पर पर्याप्त ध्यान दिया गया। प्रथम तीन पंचवर्षीय योजनाओं के दौरान केन्द्रीय व राज्य सरकारों ने ग्राम तथा लघु उद्योगों के विकास पर कुल 450.76 करोड़ रुपया व्यय किया। वार्षिक योजनाओं के मध्य कुल 132.55 करोड़ रुपये व्यय किया गया। चौथी योजना में कुल व्यय 251 करोड़ रुपये हुआ, पांचवी योजना (1974-77) में कुल व्यय 129.55 करोड़ रुपये हुआ। 1978-79 की वार्षिक योजना में व्यय 73.63 करोड़ रुपये तथा

1979-80 में लगभग 87.5 करोड़ रुपये का व्यय किया गया। छठी पंचवर्षीय योजना में अन्य योजनाओं की अपेक्षा सर्वाधिक व्यय 1,780 करोड़ रुपये का व्यय हुआ। इसके साथ ही छठी पंचवर्षीय योजना में प्रस्तावित नीतियों के ध्यान में रखते हुये 1981 में तत्कालीन प्रधानमंत्री ने बीस सूत्री कार्यक्रम के परिवर्तित रूप पर बल दिया। ग्रामों में रोजगार व आय में वृद्धि हेतु समन्वित ग्रामीण विकास तथा राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम चलाने के साथ-साथ पूंजी निवेश प्रक्रियाओं के आधार बनाने, औद्योगिक नीति को सरल बनाने, हस्त शिल्प, हथकरघा, लघु व कटीर उद्योगों को सभी सुविधायें प्रदान करने से संबंधित नीतियों को भी कार्यक्रम में रखा गया। सातवीं योजना में राष्ट्रीय ग्राम रोजगार कार्यक्रम, ग्रामीण भूमिहीन गारन्टी कार्यक्रम को भी जो छठी योजना के दौरान चालू किये गये थे, जारी रखे जायेंगे। इन प्रोग्रामों से ग्राम क्षेत्रों में 24,580 लाख मानव दिन अतिरिक्त रोजगार उपलब्ध कराया जायेगा। इस योजना (1985-90) में ग्राम तथा लघु उद्योगों में 2,752 करोड़ रुपये व्यय करने का प्रावधान है।

छोटे उद्योगों के विकास हेतु केन्द्रीय व राज्य स्तर पर अनेक संस्थायें व योजनाये चलाई गयीं। योजनाओं के मध्य मुख्य तीन राष्ट्रीय संगठनों की स्थापना की गई। लघु उद्योग विकास संगठन (1954), जिसका उद्देश्य तकनीकी सलाह देना है, लघु उद्योग के विकास से संबंधित कर्मचारियों को प्रशिक्षण देना हैं और राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम 1955, जिसका उद्देश्य छोटी औद्योगिक इकाइयों से सहायतार्थ व्यापार कार्य चलाना है। इसके अतिरिक्त खादी ग्रामोद्योग (1966), अखिल भारतीय हथकरघा बोर्ड (1962), ग्रामीण औद्योगिक परियोजना, जिला उद्योग केन्द्र आदि की भी स्थापना की गई। इन संस्थानों के सहायतार्थ कई नीतियां भी निर्धारित की गयीं। जैसे उत्पादन का आरक्षण, लघु उद्योगों द्वारा निर्मित वस्तुओं की खरीद, करों में छूट, औद्योगिक बस्तियों की स्थापना आदि। इसके अतिरिक्त अनेक संस्थाओं स्टेट बैंक आफ इन्डिया, राज्य वित्त निगम, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक व अन्य बैकिंग संस्थाओं द्वारा इन्हे ऋण सुविधायें उपलब्ध कराई जा रही हैं।

स्पष्ट है कि 1981-82 के अन्त तक लघु उद्योगों की संख्या 961 लाख के लगभग हो गयी अर्थात 25 प्रतिशत की दर से नई औद्योगिक इकाइयों से लघु उद्योग क्षेत्र में प्रवेश किया। इनका कुल उत्पादन जो 1973-77 तक की अवधि में 12,400 करोड़ रुपये का था वह 1982-83 में बढ़कर 32,600 करोड़ रुपये हो गया। 1979-80 के कुल औद्योगिक उत्पादन में इस क्षेत्र का 28 प्रतिशत हिस्सा रहा। लघु उद्योग क्षेत्र ने रोजगार के पर्याप्त अवसर भी जुटायें। 1967-77 में इस क्षेत्र में जहां 49.8 लाख व्यक्ति कार्यरत थे वहीं 1981-82 के अन्त तक इस क्षेत्र में रोजगार में लगे लोगों की संख्या बढ़कर लगभग 75 लाख हो गयी। पिछले पांच वर्षों में रोजगार प्राप्ति की औसत वृद्धि दर 5 प्रतिशत रही। इसके साथ ही पिछले दशक की अपेक्षा इस दशक में कुल निर्यात में छोटे उद्योगों द्वारा निर्यातित वस्तुओं के अनुपात में भी वृद्धि हुई। 1971-72 में जहां यह अनुपात 150 करोड़ रुपये था वहां 1981-82 में बढ़कर 1519 करोड़ रुपये हो गया अर्थात् 9.8 प्रतिशत से बढ़कर 22.72 प्रतिशत हो गया।

इन योजनाओं एवं नीति के परिणामस्वरूप भारत में लघु उद्योग के विकास की स्थिति इस प्रकार रही :-

लघु उद्योगों की संख्या लाख में	**1976-77**	**1981-82**
लघु उद्योगों की सं. (लाख में)	0.92	9.61
पंजीकृत (लाख में)	2.68	5.22
अपंजीकृत (लाख में)	3.24	5.22
उत्पादन वर्तमान मूल्य पर (करोड़ में)	12,400	32,600
रोजगार (लाखों में)	49.8	76.0

उपरोक्त आंकड़े भारत में लघु उद्योगों के तीव्र विकास की ओर संकेत कर रहे हैं, किन्तु संख्या में वृद्धि को ही इस क्षेत्र की समृद्धि का द्योतक नहीं मान लेना चाहिये। वरन महत्वपूर्ण यह है कि प्रारम्भ होने के पश्चात ये औद्योगिक इकाइयाँ अपने को कितनी शीघ्रता से विकसित करती हैं, शीघ्र ही बन्द तो नहीं हो जाती। इसके लिये जहां इन उद्योगों की तकनीकी पर ध्यान दिया जाना आवश्यक है, वहीं उद्यमियों का प्रशिक्षित होना भी आवश्यक है। यद्यपि अनेक ऐसी प्रशिक्षण संस्थायें हैं पर इनके और विस्तार की आवश्यकता है। यदि प्रशिक्षार्थी ग्रामीण क्षेत्रों के निवासी हों तो इससे ग्रामीण क्षेत्रों में उद्योग स्थापना को प्रोत्साहन मिलेगा। साथ ही ये प्रशिक्षण संस्थायें मात्र प्रशिक्षण कार्य ही न करें, वरन समय-समय पर शीघ्र कार्य सम्पादित करें। इनका ग्रामीण क्षेत्रों में प्रसार करें तथा प्रयास करें कि लघु

उद्यमियों की समस्याओं का समाधान किया जा सके। ये प्रयास जहां वस्तु का स्तर बढ़ायेंगे वहीं उसकी लागत भी कम करने में सहायक होंगे।

बाज़ार सुविधा उचित बाजार उपलब्ध कराने के लिये आवश्यक है कि इन ग्रामीण स्थानों में संचार साधनों व अन्य सुविधाओं का विकास किया जाये। पिछड़े ग्रामीण क्षेत्रों में उद्योग स्थापना की नीति तभी सफल होगी, जब उत्पादन स्थल पर ही बाजार उपलब्ध हो।

अभी तक जितनी भी योजनायें या नीतियां रही हैं, वे तर्कपूर्ण कम, भावनात्मक अधिक रही हैं। अतः स्पष्टतः ये उतनी अधिक उपयोगी नहीं रहीं, जितना उन्हें होना चाहिये था। मात्र कानूनी या सरकारी स्तर पर योजनायें प्राप्त नहीं है वरन ऐसी समन्वित व वास्तविक योजनाओं की आवश्यकता है जो वास्तव में इन ग्रामीण उद्योगों का विकास कर सकें। ग्रामीण समस्याओं का समाधान तभी सम्भव होगा जब ग्रामों को ग्राम ही रहने दिया जाये। उनको नगर न बना दें। इस दृष्टि से लघु उद्योगों का विकास ग्रामीण विकास व ग्रामीण औद्योगिकीकरण दोनों के लिए आवश्यक हो जाता है।

आर्थिक विकास के लिये यूं तो बहुमुखी प्रयास किये जा रहे हैं किन्तु क्षेत्रीय असंतुलन को कम करने की आवश्यकता है। कुछ ऐसे क्षेत्र हैं जहां उत्पादकता को बढ़ाने के लिये विस्तृत कृषि की आवश्यकता है तो कहीं गहन कृषि की आवश्यकता। पंजाब और हरियाणा में इस वृद्धि के लिए विस्तृत कृषि का प्रयास किया जाना चाहिये तो उत्तर प्रदेश, बिहार और पश्चिम बंगाल जैसे क्षेत्रों में गहन कृषि अपनायी जानी चाहिए। भूमि सुधार के क्षेत्र में भी उल्लेखनीय प्रगति हुई किन्तु बिहार, कर्नाटक, उड़ीसा और राजस्थान में इस ओर पर्याप्त ध्यान देने की आवश्कता है। बैंकों द्वारा कृषि तथा लघु और कुटीर उद्योगों में ऋण सुविधायें उपलब्ध कराने के कारण इन क्षेत्रों में विकास हुआ है। लेकिन अपेक्षित परिणाम के लिए बैंक को उदार नीति अपनाने की जरूरत है। लघु और कुटीर उद्योगों को अपनी उत्पादकता बढ़ाने के लिए अपनी पूर्ण उत्पादन क्षमता का प्रयोग करना चाहिए। इस प्रकार हम पाते हैं कि किसी भी क्षेत्र में यद्यपि उत्पादन बिन्दु पर नहीं पहुंचे हैं परन्तु इस ओर निरन्तर प्रयास जारी हैं।

बुन्देलखण्ड पी.जी. कालेज

झाँसी

हितग्राहियों को ऋण

केन्द्रीय वित्त राज्य मंत्री श्री जनार्दन पुजारी ने पिपरिया में आयोजित एक बड़े ऋण वितरण शिविर में होशंगाबाद जिले के 25,676 हितग्राहियों को 10 करोड़ 90 लाख रुपये के ऋण और अनुदान वितरित किये। इसी शिविर में बैतूल जिले के 4 हजार हितग्राहियों को भी आर्थिक मदद दी गई।

इस अवसर पर केन्द्रीय वित्त राज्य मंत्री श्री पुजारी ने घोषणा की कि ऋण पाने वाले लोगों को सारी औपचारिकतायें पूरी कर 15 दिन में राशि उपलब्ध करा दी जायगी।

मुख्य मंत्री श्री मोतीलाल वोरा ने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा कि सरकार का दृढ़ निश्चय है कि गरीबों को गरीब नहीं रहने दिया जायेगा। मदद लेकर उनके जीवन स्तर को ऊँचा उठाया जायगा। उन्होंने कहा कि ऋण वितरण शिविरों की आलोचनाओं का सही जवाब इस कार्यक्रम का पूरी ईमानदारी और निष्ठा से सही क्रियान्वयन करके ही दिया जा सकता है।

गाडरवाड़ा ऐतिहासिक ऋण वितरण समारोह

गाडरवाड़ा में आयोजित एक अभूतपूर्व तथा ऐतिहासिक ऋण वितरण समारोह में केन्द्रीय वित्त राज्य मंत्री श्री जर्नादन पुजारी ने नरसिंहपुर जिले में कार्यशील 10 राष्ट्रीयकृत बैंको की ओर से तीन करोड़ 4 लाख रुपये से अधिक के ऋण 16,110 हिग्रहियों को बितरित किये। इन हितग्राहियों में से 12,200 कमजोर वर्ग के हैं।

केन्द्रीय वित्त राज्य मंत्री ने बताया कि नये 20 सूत्री कार्यक्रम के अंतर्गत 12 बिन्दुओं पर बैंकों द्वारा आर्थिक सहायता प्रदान करने का कार्यक्रम है। विकास कार्यक्रम के अंतर्गत 1200 करोड़ रु. की राशि 39 लाख हितग्राहियों को वितरित की जायेगी तथा 10 लाख बेरोजगार युवकों को स्वरोजगार के लिए सहायता दी जायेगी। □

सफलता की कहानी

राष्ट्र निर्माण में युवकों की भूमिका

एस.डी. शर्मा

टिहरी गढ़वाल जनपद के चम्बा विकास खण्ड के सौड़/जड़ोपानी 'युवक मंगल दल' को वर्ष 1985-86 के लिए जनपद में उत्कृष्ट कार्यों के लिए शासन द्वारा 5000 रुपयों की नकद धनराशि, चल शील्ड, दरी, कुर्सी, पेट्रोमैक्स एवं नालचैन सैट प्रदान किए गये हैं।

मई 1984 में स्थापित इस 'युवक मंगल दल' की सदस्य संख्या 23 थी। पाँच गाँवों में बंटे ग्राम सभा सोड़ की आबादी लगभग 3000 है जिसमें हिन्दू तथा मुस्लिम धर्मों के लोग कृषि, बागवानी व सब्जी उत्पादन कार्यों में लगे हैं। वर्ष 1985-86 में दल के सदस्यों द्वारा विभिन्न क्षेत्रों में सराहनीय कार्य किया गया। युवकों द्वारा अनेक ग्रामीणजनों को सीमित परिवार अपनाने एवं बचत की आदत डालने हेतु प्रेरित किया गया। परिणामस्वरुप 15 महिलाओं ने अपने आपरेशन करवाये। 65 व्यक्तियों ने अल्प बचत में खाते खोल कर उनमें 3000 रुपये की धनराशि जमा की। इन युवकों ने ग्राम सभा की भूमि पर 1300 पौधे लगाये जिनमें 600 फलदार पौधे थे। पर्वतीय अंचल के 3 कि.मी. रास्ते पर श्रमदान करके मरम्मत की गई। पाँच गाँवों के बिना पढ़े लिखे लोगों हेतु साक्षरता अभियान चलाया गया तथा 15 व्यक्तियों को साक्षर किया गया। पाँच वृद्धों को पेंशन दिलाने में सहायता की गई।

वर्ष 1986-87 में दल के सदस्यों की संख्या बढ़कर 43 हो गई है। इस अवधि में युवकों द्वारा अधिक उत्साह से कार्य किया गया है। ग्राम सभा के अंतर्गत 4 हैक्टेयर भूमि पर युवकों ने 15 हजार चारापत्ती के पौधे रोपित किए तथा शासन के सहयोग से इस भूमि पर घेरबाड़ की, लोगों का प्रयाप्त मात्रा में पौधे उपलब्ध कराने के उद्देश्य से 30 नाली भूमि में पौधशाला निर्मित की गई है, जिसमें चारापत्ती के 4000 पौधे उगाये गये हैं। बरसात में इन पौधों का रोपण किया जायेगा। इस वर्ष युवकों द्वारा 4 कि.मी. रास्ते पर श्रमदान कर मरम्मत एवं सफाई कार्य किया गया, जिसमें 450 मानव दिवस लगे। ग्राम सभा क्षेत्र में अल्प बचत के 60 खाते खोल कर उनमें 2500 रु. जमा करवाये गये, 10 महिलाओं के आपरेशन करवाये गये तथा नौ व्यक्तियों को साक्षर किया गया। एक वृद्धा को पेन्शन दिलाने में सहायता की गई।

गांव की ओर

संतोष 'निर्मल'

ऐसे ही शहर तुम्हें
जाने न दूंगी,

पहले कसम धराऊंगी
जल उठवाऊंगी।

जाने कितना अरसा बीते,
फिर भी हियरा नहीं पसीजे,

मैं इतनी चुप्पी का
बोझ कहाँ सह पाऊंगी।
कब तक टोना-टटका साथ रहेगा,
गाँव-घर सभी सूना नाथ! रहेगा,

मैं किससे मान-मनौती
कब तलक मनाऊंगी।

11, केवल विहार, देहरादून

शासन से प्राप्त उक्त धनराशि में से कुछ राशि नर्सरी हेतु बीज, खाद, चकबन्दी कार्यों पर खर्च की गई है। साथ ही सांस्कृतिक कार्यक्रमों हेतु वाद्य यंत्रों व पर्दों की खरीद की गई है। युवाओं द्वारा समय-समय पर परिवार कल्याण वृक्षारोपण पर्यावरण संक्षण, अल्प बचत, नशाबन्दी, दहेज उन्मूलन आदि विषयों पर सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है।

समाज निर्माण कार्यों में लगे दल के युवा सदस्यों ने अपने क्षेत्र के समस्त ग्रामवासियों का दिल जीत लिया है। वे सभी लोगों के सुख-दुख में समान रुप से सम्मिलित होते हैं जिससे इस क्षेत्र में परस्पर एकता का वातावरण बना है व सामाजिक बुराईयाँ दूर होती जा रही हैं।

38-डी, तिलक रोड
देहरादून

गुणों की खान : तुलसी

रेखा सक्सैना

हमारे देश में प्राचीन काल से ही तुलसी के महत्व को स्वीकारा गया है। विभिन्न धार्मिक मान्यताओं के आधार पर यह उपयोगी वनस्पति आज भी अपनी गरिमा बनाए हुए है। औषधीय गुणों के कारण इसे आयुर्वैदिक चिकित्सक सर्व रोग हर अथवा अमृत तुल्य कहते हैं। धार्मिक पूजा-पाठों, यज्ञों, कथा-कीर्तनों, व्रतों आदि में तुलसी पत्तों का होना आवश्यक-सा माना जाता है, विशेषकर प्रसादों में। तुलसी से सम्बन्धित अनेक धार्मिक कथाएं आज भी कही-सुनी जाती हैं। ऐसा कोरा अन्धविश्वास के कारण होता हो, ऐसी बात नहीं है क्योंकि तुलसी निस्सन्देह प्रकृति की एक ऐसी देन है जिसकी उपयोगिता और गुणों को आधुनिक वैज्ञानिक भी स्वीकारते हैं।

तुलसी का पौधा भारत में सर्वत्र सुगमता से उपलब्ध हो जाता है। इसकी कई किस्में व नाम हैं। कुछ प्रचलित नाम हैं - सुरसा, वैष्णवी, अमृता, सुरवल्लरी व बहुमंजरी आदि। सामान्यत: इसके पौधे की आयु पांच वर्ष है किन्तु अपनी अवधि पूर्ण करने से पूर्व यह अनेक पौधों को जन्म दे जाती है।

आयुर्वैदिक चिकित्सा में वैसे तो तुलसी के असीमित प्रयोग कहे गए हैं किन्तु मुख्य रूप से चिकित्सक निम्नलिखित प्रयोगों की सलाह देते हैं:

भोजन के उपरान्त चार-पांच तुलसी पत्ते चबा कर खा लेने से भोजन सरलता से पचता है।

बच्चों के पेट फूलने की अवस्था में तुलसी के पत्तों का एक चम्मच रस गुनगुना करके पिलाना चाहिए व इसी रस की पेट पर मालिश भी करनी लाभदायक है।

विभिन्न प्रकार के ज्वरों यथा-म्यादी बुखार, मलेरिया व शीत ज्वर में तुलसी पत्तों का रस शहद में मिला कर सेवन करने से लाभ मिलता है।

यदि गले में खराश हो या गला खराब रहता हो तो तुलसी के पत्तों का रस व अदरक का रस शहद में मिला कर चाटने से परेशानी दूर हो जाती है।

तुलसी के पत्तों का रस व नींबू का रस मिला कर (समान मात्रा) नियमित रूप से लेप की तरह लगाने से चेहरे की झाइयां व धब्बे दूर हो जाते हैं।

तुलसी के पत्तों को पानी में उबाल कर गरारे करने से खराब गला साफ हो जाता है। इस पानी में थोड़ा-सा नमक भी मिला लेना चाहिए और पानी हल्का गर्म रहते हुए ही गरारे करना लाभप्रद रहता है।

जिन व्यक्तियों को प्राय: आलस्य, बेचैनी, हाथ-पैरों में दर्द जैसी शिकायतें रहती हों, उन्हें कुछ दिन यह प्रयोग करना चाहिए। छाया में सुखाई गई तुलसी की पत्तियों का चूर्ण शहद में मिलाकर रख लें और ऊपर से गुनगुना दूध पीएं।

पेट की गड़बड़, वायु विकार, श्वांस-दमा आदि की दशा में तुलसी के पत्ते व सैंधा नमक पानी में उबाल कर सेवन करें, लाभकारी प्रयोग है।

तुलसी के पत्तों का रस, लौंग व कालीमिर्च का थोड़ा-सा चूर्ण मिला कर लगाने से दांत का दर्द ठीक हो जाता है।

उदर-कृमि दूर करने के लिए तुलसी के 10-15 पत्तों को गुड़ के साथ मिला कर दिन में तीन बार सेवन करें।

चर्म रोगों जैसे दाद, खाज, खुजली से प्रभावित त्वचा पर तुलसी के पत्तों का रस व नींबू का रस समान मात्रा में मिलाकर लेप करना लाभप्रद है।

तुलसी के पत्तों का रस गोले के तेल में मिला कर जले हुए स्थान पर लगाने से जलन दूर होती है तथा शीतलता मिलती है।

किसी विषैले कीड़े के काट लेने पर प्रभावित स्थान पर तुलसी की जड़ को पीस कर लगा दें और उस व्यक्ति को तुलसी के पत्तों का रस पानी में घोल कर पिलाएं। जहर का असर कम होगा।

तुलसी के पत्तों का रस थोड़े-से कपूर में मिला कर माथे पर लेप करने से सिरदर्द में लाभ मिलता है।

सामान्य अवस्था में जी मिचला कर उल्टियां होने की दशा में तुलसी व पोदीने की पत्तियों को सौंफ के साथ पानी में उबाल कर पीने से सुधार होता है।

अचानक मूर्छा आ जाने पर तुलसी के पत्तों के रस में सैंधा नमक मिला कर नाक में कुछ बूंदें डालने से होश शीघ्र आने की सम्भावना हो जाती है।

1277/डी०, गली न० 4,
पूर्वी रोहताश नगर, शाहदरा,
दिल्ली-110032.

केवल पेड़ लगाना ही काफी नहीं है। इसे पशुओं, कीड़ों व बीमारियों से बचाना भी आवश्यक है।

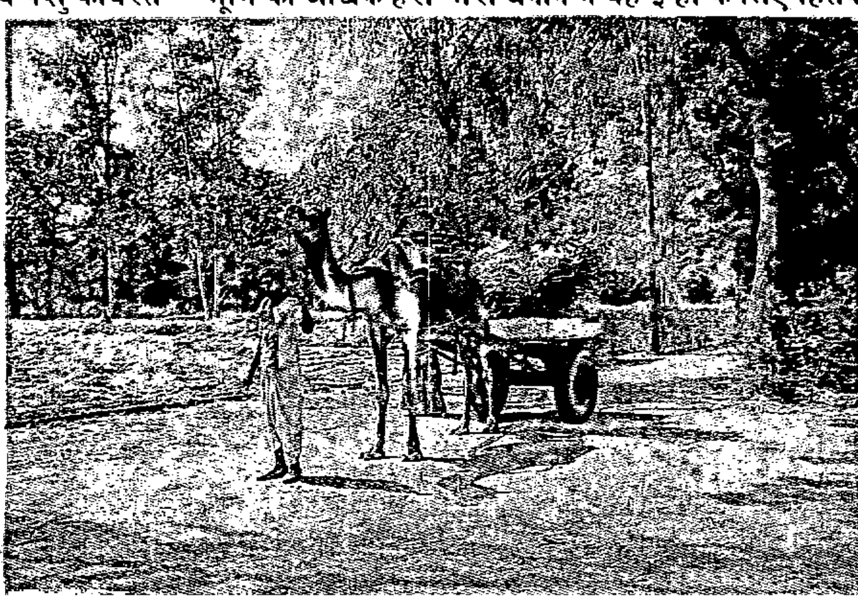

मनुष्य व पशु कार्यरत — भूमि को अधिक हरा-भरा बनाने में यह इन्हीं के लिए हितकारी है।

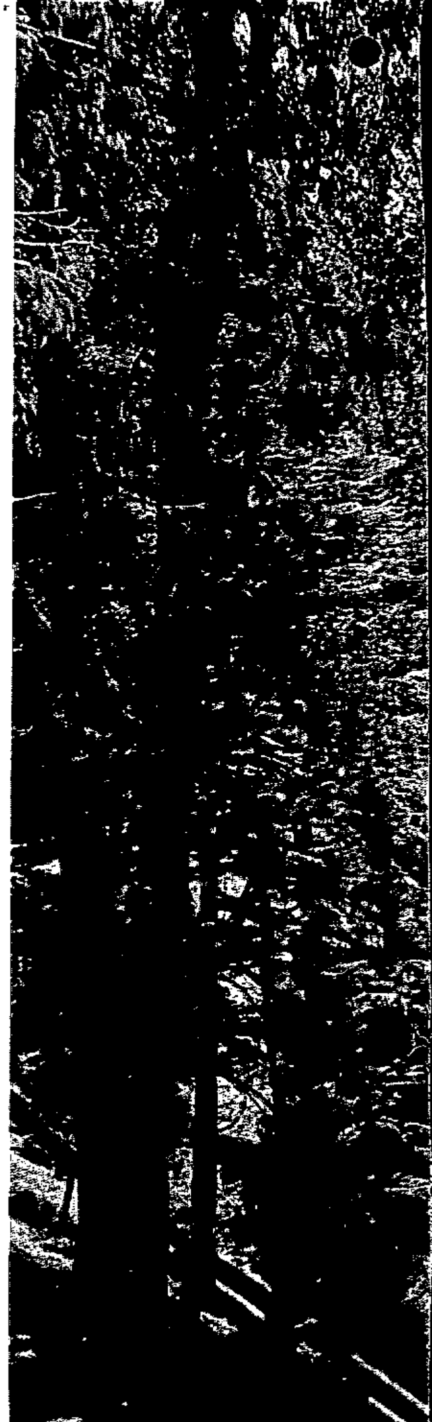

सामा

अनंतकाल से पेड़ मनुष्य को छाया, भोजन, ई
पुनीत कार्य की संज्ञा दी गयी है। वन हमारी संस्कृ

भारत में कुल भू-भाग का लगभग 23 प्रतिश
हैं। भारत सरकार द्वारा 1952 में घोषित राष्ट्रीय
सिफारिश की गयी थी। भारत में वनों का क्षेत्रफ
न्यूनतम अनुपात वाले देशों में होती है। हाल में साम
लकड़ी खासकर ईंधन की कमी के संकट से निपटने
कार्यक्रमों के प्रभावी कार्यान्वयन तथा प्रचार-प्रसा
महिलाओं का इस काम में अधिक योगदान प्राप्त
निम्नलिखित बातों पर बल दिया जाता है।

– वन विभागों तथा जनता द्वारा स्वेच्छा से सरका
– वन विभागों द्वारा सड़कों, रेलमार्ग तथा नहरों
– काट डाले गये वनों की वन विभाग द्वारा पुनस्था
– वन विभागों की सहायता में निजी भूमि बेकार

गरीबी हटाने के लिए

प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी के निर्देशानुसार तैयार किया 20 सूत्री कार्यक्रम का 1 अप्रैल 1987 से शुभारम्भ हो गया। यह कार्यक्रम पिछले वर्ष 20 अगस्त, 1986 को दोनों सदनों के पटल पर रखा गया था। इससे देश में गरीबी को हटाने में बड़ी सहायता मिलेगी। इस कार्यक्रम का विस्तार किया गया है। इसके अन्तर्गत पीने का पानी, स्वास्थ्य सुविधाएं, परिवार कल्याण कार्यक्रम को अपनाने शिक्षा का विस्तार, महिलाओं के लिए समानता, अनुसूचित जन-जातियों तथा जन-जातियों के लिए न्याय, युवाओं के लिए नए अवसर, समाज के कमजोर वर्गों के रहने के लिए मकान, गंदी बस्तियों में सुधार तथा पर्यावरण की सुरक्षा भी शामिल है। गरीबी हटाने के अलावा इस कार्यक्रम का उद्देश्य कृषि उत्पादन में सुधार, आय की असमानताओं में कमी, सामाजिक तथा आर्थिक विषमताओं को दूर करना तथा जीवन स्तर में सुधार लाना है।

विभिन्न गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों के कार्यान्वयन के फलस्वरूप बड़ी संख्या में लोगों को गरीबी की रेखा से ऊपर उठाने में मदद मिली है और सातवीं योजना की अवधि में 6 करोड़ लोगों को गरीबी की रेखा से ऊपर उठाने की संभावना है। इस बात का अनुमान लगाया गया कि 1984-85 के दौरान 27 करोड़ लोग अब भी गरीबी की रेखा से नीचे जीवन-निर्वाह कर रहे हैं। आज भी देश की एक तिहाई जनसंख्या गरीबी से जूझ रही है। सरकार ने ऐसे लोगों के जीवन स्तर में सुधार लाने के लिए ऐसी योजनाएं शुरू की हैं जिनसे आय पैदा हो। इन योजनाओं को दो श्रेणियों में बांटा जा सकता है :

1. स्व रोजगार योजना
2. वेतन रोजगार योजना

सरकार ने घर-घर जाकर प्रत्येक गांव में सर्वेक्षण किये हैं ताकि जो लोग गरीबी की रेखा से नीचे रह रहे हैं उनकी पहचान की जाए तथा साथ ही उन लोगों की जिनको छठी योजना में सहायता दी गई थी और जो गरीबी से अब भी प्रभावित हैं पहचान की जाए। इसके अतिरिक्त इन सर्वेक्षणों से उन व्यक्तियों की पहचान में मदद मिलेगी जिनको गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों का लाभ प्राप्त नहीं हुआ है। यद्यपि गरीबी की रेखा के अन्तर्गत सहायता के लिए परिवार की वार्षिक आय 6400 रुपये या उससे कम रखी गयी है। सहायता प्रदान करने के लिए यह आमदनी घटाकर 4800 रुपये की गयी है। साधनों की कमी को देखते हुए उन परिवारों को प्राथमिकता दी जाएगी जिनकी वार्षिक आमदनी 3500 रुपये या इससे कम होगी।

20 सूत्री कार्यक्रम के अन्तर्गत उत्पादन बढ़ाने और जल के बेहतर इस्तेमाल से उत्पादकता में सुधार लाने, वर्षा पर निर्भर खेती के लिए संशोधित कार्यक्रम तैयार करने, बेहतर फसल, वनरोपण के काम में तेजी लाना तथा गांवों में ऊर्जा की सप्लाई पर जोर दिया गया है।

सातवीं योजना में सार्वजनिक क्षेत्र के कुल परिव्यय 1 लाख 80 करोड़ में से लगभग एक तिहाई राशि 20 सूत्री कार्यक्रम के अन्तर्गत शामिल कार्यक्रमों के लिए उपलब्ध करायी जाएगी। □

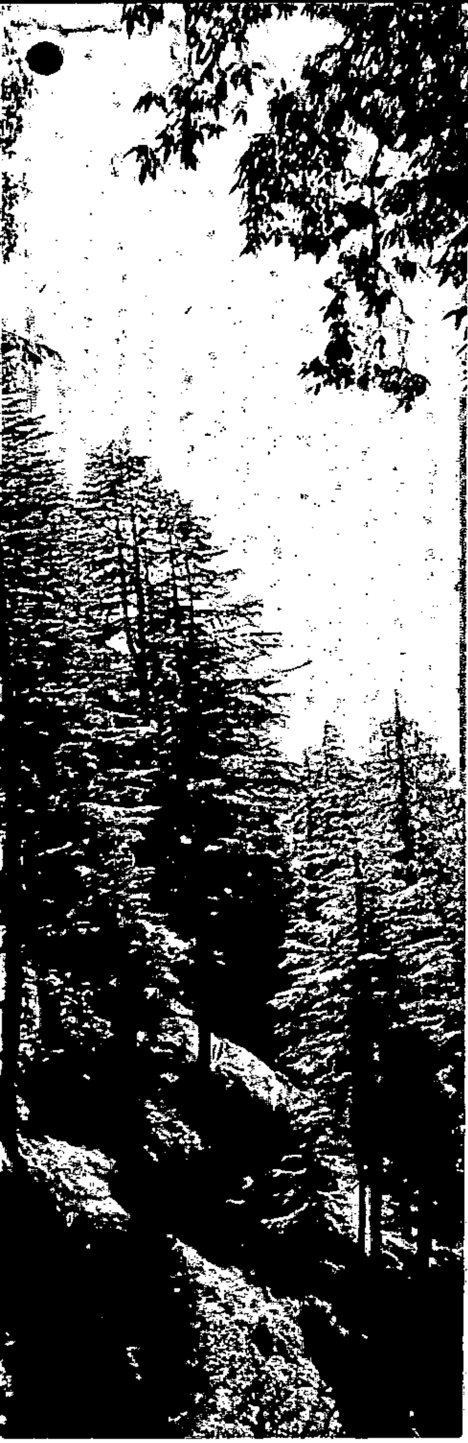

ानिकी

 देते आ रहे हैं। हमारे ग्रंथों, शास्त्रों में पेड़ रोपण को
ओं, रीति-रिवाजों का अभिनव अंग रहे हैं।

च्छादित है। ये वन 7.5 करोड़ हैक्टेयर क्षेत्र में फैले हुये
में देश के 33 प्रतिशत भू-भाग में वन रहने देने की
क्त 0.12 हैक्टेयर है और इस दृष्टि से उसकी गिनती
की के क्षेत्र में मिले अनुभव से पता चलता है कि देश में
निकी पर अधिक बल देना होगा। सामाजिक वानिकी
विद्यालयों तथा निजी एजेन्सियों को शामिल करना व
निवार्य है। सामाजिक वानिकी कार्यक्रम में मुख्यत:

मुदायिक भूमि में ग्रामीण वन रोपण।
रकारी भूमि पर पेड़ रोपण।

न बांधों पर पेड़ लगाना।

स्त्रियां जानती हैं कि पोषण का महत्व — चाहे यह शिशु का हो या फिर पेड़ का।

भूमि के प्रत्येक उपलब्ध टुकड़े को सामाजिक वानिकी के अंतर्गत लिया जाना चाहिये।

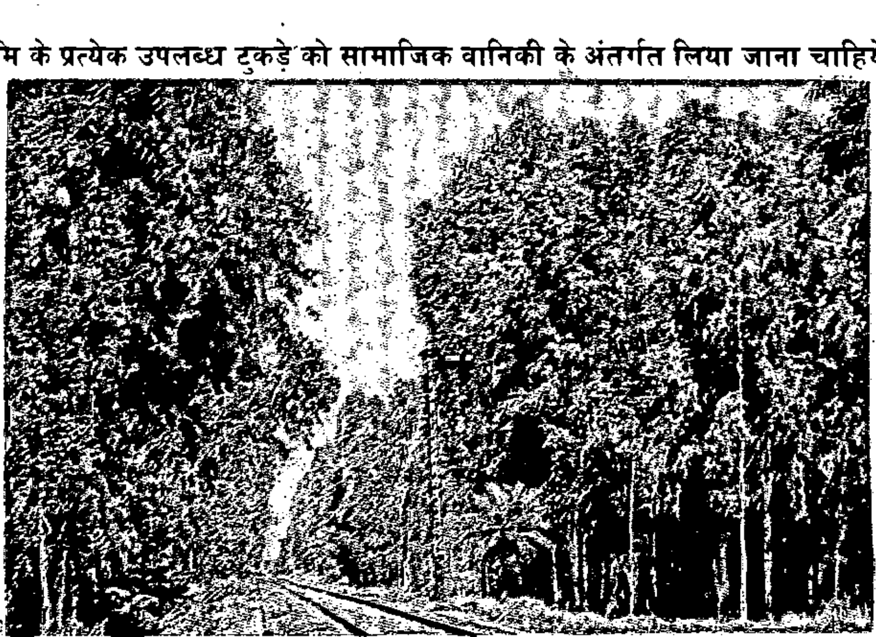

जनजातीय क्षेत्रों के लिए खाद्यान्नों की विशेष आपूर्ति

किसी राष्ट्र की प्रगति केवल आर्थिक गतिविधियों के विभिन्न क्षेत्रों के संकेतों द्वारा नहीं नापी जा सकती, न ही वढ़ते हुए आर्थिक ढांचे से ही इसे आंका जा सकता है। किसी भी लोकतांत्रिक प्रशासन का यह कर्तव्य है कि वह आर्थिक लाभों का न्यायपूर्ण बटवारा करे। इस बटवारे में समाज के सबसे अधिक कमजोर वर्गों का विशेष ध्यान रखा जाना चाहिए।

हरित क्रान्ति पर संगठित अनुसंधान, वैज्ञानिक प्रगति तथा विस्तार-उपायों द्वारा भारत खाद्यान्न आयात करने वाले देश से परिवर्तित होकर एक खाद्यान्न निर्यातक देश के रूप में उभर सका है। खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि के इस पूरे काल में हमारी सरकार का प्रयास लोगों को दूर-दराज इलाकों में भी उचित मूल्य पर ही आवश्यक वस्तुएं उपलब्ध कराने का रहा है। सार्वजनिक वितरण प्रणाली के पीछे यही भावना छिपी है जिसे आम शब्दावली में उचित दर की दुकाने या राशन व्यवस्था कहा जाता है।

जनजातीय समूहों के रूप में हमारे समाज का एक भाग काफी कमजोर तथा आर्थिक रूप से पिछड़ा है। देश के कुछ राज्यों में जनजातीय आबादी 25 प्रतिशत या उससे भी अधिक है। उत्तर-पूर्व के राज्य और केन्द्र-शासित क्षेत्र तथा लक्षद्वीप जैसे क्षेत्र जनजातीय बहुल क्षेत्र हैं। इन क्षेत्रों में आवश्यक सामग्री की आपूर्ती सुनिश्चित करने के लिए तथा विकास, रोजगार के अवसर एवं आर्थिक स्तर की कमी को देखते हुए विशेष ध्यान देने हेतु सरकार ने समन्वित जन-जातीय विकास परियोजना क्षेत्रों के लिए रियायती मूल्य योजना प्रारंभ की है।

प्रधानमंत्री के जनजातीय इलाकों के दौरों के पश्चात सरकार ने नवम्बर 1986 को घोषणा की कि गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम के एक भाग के रूप में समन्वित जनजातीय विकास परियोजना क्षेत्रों में विशेष रियायती मूल्यों पर खाद्यान्नों की आपूर्ति की जाएगी।

इस योजना में समन्वित जनजातीय विकास परियोजना के 81 क्षेत्रों तथा छः जनजाति बहुल राज्यों एवं केन्द्रशासित क्षेत्रों — मेघालय, नगालैंड, अरुणाचल प्रदेश, मिजोरम, लक्षद्वीप तथा दादर और नागर हवेली गैर जनजाति सहित पूरी जनसंख्या शामिल है। मध्य प्रदेश, बिहार, उड़ीसा, गुजरात, कर्नाटक और महाराष्ट्र में फैले लगभग 5 करोड़ 70 लाख (1981 की जनगणना के अनुसार) लोग इस योजना से लाभान्वित हुए हैं।

सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अन्तर्गत जहां गेहूं तथा चावल का केन्द्रीय निर्गम मूल्य क्रमशः 1.90 रुपये तथा 2.39 रुपये प्रति किलोग्राम है वहीं समन्वित जनजातीय विकास परियोजना क्षेत्रों में यह मूल्य क्रमशः 1.25 रुपये तथा 1.60 रुपये प्रति किलोग्राम है। संसाधन लागत के रूप में राज्य सरकारों को 25 पैसा प्रति किलोग्राम की अतिरिक्त राशि देते हुए गेहूं तथा साधारण चावल का अन्तिम मूल्य क्रमशः 1.50 रूपये तथा 1.85 रुपये प्रति किलोग्राम रखा गया है।

वितरण प्रणाली को दैनिक अथवा साप्ताहिक आधार पर चलाया जा सकता है ताकि दैनिक मजदूरी पर काम करने वाले इन दुकानों से अपने खाद्यान्न प्राप्त कर सकें। कुछ जनजातीय इलाकों में साप्ताहिक हाट की परम्परा का लाभ उठाते हुए चलती-फिरती दुकानों का और अधिक प्रयोग किया जा सकता है।

इस तरह से अतिरिक्त सहायता प्रदान किए जाने से निम्नतम आय वर्ग के लोगों को काफी आर्थिक राहत होने तथा खाद्यान्न के इस प्रकार सुलभ कराए जाने से लक्षित समूहों की जीवनचर्या तथा कार्य-स्थिति में सुधार आने की आशा है। ☐

आदिवासी विकास

एस.एन. भट्टाचार्य

हमारे देश में स्वर्गीय पंडित जवाहर लाल नेहरू के नेतृत्व के दौरान ही भारत सरकार ने आदिवासियों को मात्र पुरातत्व की वस्तु न मानकर उन्हें विकास कार्यक्रमों में शामिल करने, उन्हें इन कार्यक्रमों का लाभ दिलाने तथा देश की मुख्य धारा में मिलाने के प्रयास आरंभ कर दिये थे। हमारे देश की कुल जनसंख्या का दस प्रतिशत आदिवासी लोग हैं तथा इनकी सुस्पष्ट तथा विशेष जीवन शैली है। पंडित नेहरू ने स्पष्ट शब्दों में कहा था, "मैं नहीं बता सकता कि कौन-सी जीवन शैली बेहतर है — हमारी या आदिवासियों की। लेकिन इतना जरूर कहूँगा कि कुछ बातों में उनकी जीवन शैली हमसे कहीं अच्छी है। इसलिये अगर हम स्वयं को उनसे बेहतर मानने लगें या उन्हें यह बताने लगें कि वे ऐसा न करें, वैसा करें तो यह सरासर ज्यादती होगी। उन्हें अपने जैसा बना देने की कोई भी कोशिश गलत कदम होगा।"

नेहरूजी का कहना था कि आदिवासी विकास का कोई भी कार्यक्रम निम्नलिखित पांच सिद्धांतों पर आधारित होना चाहिये:-

1. इन्हें अपने हिसाब से विकास करने दिया जाये और इन पर कोई बात थोपी न जाये। इनकी अपनी संस्कृति तथा परम्परागत कलाओं को हर तरह से प्रोत्साहन दिया जाये।
2. जमीन तथा बनों पर आदिवासी अधिकार का सम्मान किया जाये।
3. आदिवासी क्षेत्रों में प्रशासन तथा विकास कार्य चलाने के लिए इन्हीं में से लोगों को तैयार किया जाये, उन्हें प्रशिक्षण दिया जाये। शुरू में कुछ बाहर के तकनीकी जानकार लोगों की जरूरत पड़ सकती है।
4. हमें इन क्षेत्रों में जरूरत से अधिक प्रशासनिक कायदे-कानून लादने की जरूरत नहीं है। न ही बहुत अधिक योजनाओं को लादना ठीक है। इसकी जगह हमें इन लोगों की ही सामाजिक व सांस्कृतिक संस्थाओं के माध्यम से काम करना चाहिये।
5. हमें इन क्षेत्रों में काम के परिणाम आंकड़ों के आधार पर या खर्च की गई राशि के आधार पर नहीं आंकने चाहिये बल्कि इस बात पर गौर करना चाहिये कि वहां हम मानवीय परिवर्तन कितना ला सके हैं।

पंडित नेहरू ने 2 अक्टूबर, 1952 को राष्ट्रीय सामुदायिक विकास कार्यक्रम का शुभारंभ किया था। शुरू में 165 खंडों में 55 परियोजनायें चलायी गयीं। इनमें आदिवासी खंड भी शामिल थे। बाद में यह निर्णय हुआ कि दूसरी पंचवर्षीय योजना के अंत तक सारे देश में सामुदायिक विकास तथा राष्ट्रीय विस्तार सेवा लागू कर दी जाये। बलवंतराय मेहता की अध्यक्षता वाले अध्ययन दल ने यह अवधि सीमा 1963 तक बढ़ा दी।

आदिवासी बहु-उद्देशीय खण्ड

हमारे देश में आदिवासियों की संख्या एक करोड़ से अधिक है तथा ये विभिन्न राज्यों में रहते हैं। परन्तु दुर्भाग्य से ये देश के सबसे पिछड़े क्षेत्रों में केन्द्रित हैं। यह महसूस किया गया कि सामान्य सामुदायिक विकास योजनाओं से संभवतः ये लाभान्वित न हो पाये क्योंकि ये लोग लगभग प्रागैतिहासिक परिस्थितियों में ही जीवन बिता रहे थे। लेकिन इतनी प्राचीनता के बावजूद इनकी सर्वाधिक रंगारंग जीवन शैली है, घर व परिधान साफ-सुथरे होते हैं, फड़कता संगीत है हालांकि इनके यहां पौष्टिक भोजन का नितांत अभाव रहता है। विख्यात नृविज्ञानियों के अध्ययन से सिद्ध हुआ है कि अनुसूचित जनजातियों के लोग अब भी सुगठित कबीलों के सदस्य के रूप में रहते हैं। रेल व सड़क सम्पर्क के अभाव में आदिवासी लोग अलग-अलग जीवन बिताते हैं। इन सब बातों को ध्यान में रखकर आदिवासी बहु-उद्देशीय खंड योजना बनायी गयी और इसके लिए अतिरिक्त कर्मचारी, धनराशि व तकनीकी साधन जुटाये गये ताकि इन क्षेत्रों का विकास तेजी से हो सके। प्रत्येक खंड की आबादी 25,000 थी। शीघ्र ही एक हजार ऐसे खंडों में काम शुरू हो गया। इनके विकास कार्यक्रम बनाते समय यह ध्यान रखा गया कि इन क्षेत्रों का भौगोलिक, मौसमी, पर्यावरणीय तथा सांस्कृतिक वातावरण भंग न हो।

कार्यकर्ताओं को विशेष प्रशिक्षण

आदिवासी कार्यकर्ताओं तथा इन आदिवासी क्षेत्रों में काम के लिए चुने गये अन्य लोगों को विशेष प्रशिक्षण चार प्रादेशिक आदिवासी जानकारी एवं अध्ययन केन्द्रों में दिया गया है। इनमें रांची केन्द्र का काम महत्वपूर्ण रहा।

प्रशिक्षण का मूल्यांकन

संयुक्त राष्ट्रीय सामुदायिक विकास मूल्यांकन दल ने इस

प्रशिक्षण कार्यक्रम का अध्ययन किया। उसने अपनी रिपोर्ट में कहा, "यह कार्यक्रम प्रशासनिक व शैक्षिक दृष्टि से अत्यंत कठिन कार्य है।" इस कार्यक्रम की अवधि कम व पाठ्यक्रम बड़ा था। सामुदायिक विकास कार्यक्रम के तेजी से विस्तार के कारण कार्यकर्ताओं की भर्ती जल्दी करनी पड़ती थी। उन्हें संक्षिप्त प्रशिक्षण हीं दिया जाता था जो कि प्रभावशाली नहीं हो पाता था। दल ने अपनी रिपोर्ट में कहा कि, "अधिकांश प्रशिक्षणार्थी प्रशासनिक सेवाओं की तरह थे। इनमें से केवल पचास प्रतिशत ने ही काम करने में दिलचस्पी दिखायी। अन्य 25 प्रतिशत केवल काम पाने के लिए प्रशिक्षण ले रहे थे। बाकी 25 प्रतिशत को कोई दिलचस्पी नहीं थी।"

कृषि बहु-उद्देशीय सहकारी समितियां

विकास कार्यों में ऋण का बड़ा महत्व है। सन् 1950 में श्री वी.टी. कृष्णमाचारी की अध्यक्षता वाली समिति ने सुझाव दिया था कि प्रत्येक गांव में लोगों की आर्थिक मदद के लिए एक सहकारी समिति होनी चाहिये। लेकिन रिजर्व बैंक ने इस सुझाव को नहीं माना और कहा कि कुछ गांवों को मिलाकर ग्राम समूह बनाये जायें और प्रत्येक ऐसे समूह के लिए एक-एक सहकारी समिति बनायी जाये। तब सरकार ने बाबा समिति बनायी जिसने आदिवासी आवश्यकताओं तथा आकांक्षाओं का अध्ययन करके अपने सुझाव दिये। इनके अन्तर्गत बड़ी कृषि बहु-उद्देशीय सहकारी समितियां बनायी गयी और हाट अर्थात साप्ताहिक बाजार को इनका केन्द्र बिंदु बनाया गया। अब अग्रणी बैंक कृषि ऋण इन समितियों के माध्यम से देते हैं। इन समितियों के उपभोक्ता भंडारों से मिट्टी का तेल, माचिस, कपड़ा, चीनी, साबुन, खाद, बीज, गेहूं, चावल आदि भी बेचे जाते हैं।

आदिवासी विकास में 20-सूत्री कार्यक्रम

स्वर्गीय प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने 6 फरवरी, 1981 को बस्तर के पास मानपुर में आदिवासियों की एक विशाल सभा में कहा था, "राष्ट्र के लिए आदिवासी लोगों के कल्याण उपाय करना सबसे पहली आवश्यकता है।" अपने 20-सूत्री कार्यक्रम में उन्होंने अनुसूचित जनजातियों के उत्थान को विशेष स्थान दिया।

मनोरम बस्तर

आदिवासी जिला बस्तर 39,000 वर्गमील क्षेत्रफल में फैला हुआ है तथा यह देश का सबसे बड़ा जिला है। यह केरल राज्य से भी अधिक विशाल है। यहां की 68 प्रतिशत जनसंख्या आदिवासियों की है जो मारिया, गोंड, हल्बा, भलिया, धुरवा और परजा जातियों के हैं। यह जिला सात जनजाति उप-योजनाओं में विभक्त है और ये आगे 32 जनजाति विकास खंडों में बंटे हुये हैं। यहां झुम खेती प्रचलित है जैसा कि अन्य आदिवासी क्षेत्रों में होता है। इस कारण बहुमूल्य वन सम्पदा बर्बाद हो जाती है। (हाल में मिजोरम सरकार ने निर्णय लिया है कि प्रत्येक आदिवासी परिवार को खेती के लिए जमीन आवंटित की जायेगी)।

आदिवासी मुख्यतः वन तथा वन उत्पादों पर निर्भर करते हैं। ये उत्पाद हैं गोंद, शहद, रेशम के कीड़े, लाख, चिरंजी बीज, महुआ, फल, साल पत्ते, बीज, तेंदू पत्ते। कुछ समय पहले वहां राज्य सरकार द्वारा विश्व बैंक की मदद से कागज मिल लगाने की योजना रद्द कर दी गयी। इसके लिये लुगदी चीड के पेड़ों से बनायी जानी थी और ये पेड़ 40,000 हैक्टेयर क्षेत्र में फैले महुआ व साल के वनों का अधिग्रहण करके उनमें लगाये जाने थे। पर यह आदिवासियों को स्वीकार नहीं था क्योंकि उन्हें चीड़ के पेड़ों से फल, चारा या ईंधन नहीं मिल सकता था। इसके अलावा चौड़े पत्ते वाले महुआ व साल के पेड़ भूमिगत जल का संरक्षण करते हैं, नुकीले पत्तों वाले चीड़ नहीं। इंदिरा सरोवर परियोजना के लिये वन साफ करने की अनुमति भी नहीं दी गयी है क्योंकि वहां साल के वन पहले ही सिमटते जा रहे हैं। अनुमान है कि बस्तर में 18 करोड़ 70 लाख क्यूबिक मीटर औद्योगिक लकड़ी तथा 43 लाख 70 हजार के करीब बांस विद्यमान हैं। लेकिन यह मात्रा धीरे-धीरे कम होती जा रही है।

बस्तर अब भारतीय इतिहास का स्थिर पूर्णवत क्षेत्र नहीं रहा। अब वहां भी अन्य आदिवासी क्षेत्रों की तरह बाहर के लोग पहुंच गये हैं। अब वहां विभिन्न विभागों के ढेरों कर्मचारी पहुंचे हुये हैं। इनके अलावा व्यापारी लोग, ठेकेदार और ढेरों कारिन्दे भी वहां मौजूद हैं। विदेशी सहायता के बल पर चल रही स्वयंसेवी एजेन्सियों की संख्या भी वहां कम नहीं हैं।

अब बस्तर के दूर-दराज गांवों में भी चाय व सिगरेट पहुंच चुके हैं। आधुनिकता का सामान– साइकल, ट्रांजिस्टर, टार्च, प्लास्टिक के डिब्बे, कांच की चूड़ियां, नाइलन की साड़ियां – इस आदिवासी जिले में अब अजूबा नहीं रहा। ऐसी घटनायें अब आम सुनने को मिलती हैं कि अमुक गांव में एक लड़की ने ब्लाउज पहनने की जिद पकड़ ली या कुछ युवक-युवतियां गांव छोड़कर निकटवर्ती लौह खान में रोजगार के लिए निकल गये।

बैलाडिला से विशाखापत्तनम् को लौह अयस्क डी बी के रेल मार्ग से जाता है। इस रेल मार्ग ने शांति, स्थिर आदिवासी जीवन को प्रभावित किया है। राष्ट्रीय राजमार्ग संख्या 42 व 43

इस जिले से होकर गुजरते हैं। इन मार्गों से जुड़ने वाली सड़कों की अच्छी देखभाल की जाती है लेकिन गांवों को जाने वाले रास्ते अब भी कच्चे हैं। लेकिन बेईमान व्यापारियों को कोई फर्क नहीं पड़ता। वे नकली दवायें और मिलावटी खाद भोले-भाले आदिवासियों को बेचने के लिए दूर-दराज के गांवों में पहुंच ही जाते हैं।

आदिवासी चाहे बस्तर के हों या बिहार के, वे अपनी परम्परा व संस्कृति में घुसपैठ पर चिंतित हैं। "घोटुल गांव का वह हिस्सा, जहां युवा लोग अपना जीवन साथी चुनते हैं — दिन-प्रतिदिन महत्वहीन होता जा रहा है। मारिया गोंडो की संस्कृति का अभिन्न अंग था घोटुल। लेकिन बाहरी तत्वों के अतिक्रमण के कारण उनका यह नितांत निजी जीवन पहलु छिन्न-भिन्न हो रहा है। स्थानीय मदिरा सुल्फी' अथवा नगदी देकर कुछ भी किया जा सकता है। नेहरूजी की यह चेतावनी हम भूल गये हैं कि "आदिवासी क्षेत्रों में बहुत अधिक बाहरी लोगों को भेजना" खतरनाक है।

नयी दिल्ली में गणतंत्र दिवस समारोहों में आदिवासी नृत्यों का समावेश नेहरूजी की देन है। लेकिन अगर बस्तर के आदिवासियों की संस्कृति की मनोहारी छटा तथा माधुर्य का असली रूप देखना हो तो फरवरी-मार्च में होने वाले उनके वार्षिक उत्सव से अधिक उपयुक्त कोई अवसर नहीं है। यह उनका सबसे बड़ा व महत्वपूर्ण सामाजिक उत्सव है। सफेद धोती धारण किये आदिवासी युवक जब सिर पर मोर के पंख पर फूल सजाये, कमर में घुंघरू बांधे तालबद्ध नृत्य करते हैं तो लगता है मानो हवा में तैर रहे हों। कमर लचकाकर मोहक स्वर निकालकर युवक रूपी मोर मनमोहक केशसज्जा वाली मदमाती आदिवासी युवती को मंत्रमुग्ध किये उसके आगे-आगे नृत्य शैली में थिरकता चलता है। रात ज्यों-ज्यों गहराती है, नृत्य की थिरकन तथा स्वर लहरी तेज होती जाती है। वातावरण उन्माद व हिलोरों से भर जाता है। कला व सौंदर्य चरमोत्कर्ष पर होते हैं।

पर्यावरण व विकास

बिहार के मुख्यमंत्री ने 21 मार्च 1987 को घोषणा की कि केंद्र ने रांची में कोयल कारो परियोजना रद्द कर दी है। यह परियोजना 50 हजार हैक्टेयर क्षेत्र में लगायी जानी थी, 50 आदिवासी गांव अधिग्रहीत किये जाते। इसलिये रांची जिले के आदिवासियों ने इसका घनघोर विरोध किया, राज्य सरकार जमीन नहीं ले पायी तथा राष्ट्रीय पन बिजली निगम को यह परियोजना छोड़नी पड़ी।

ओड़ीसा में गंधमर्धन में बाक्साइट खनन परियोजना को केन्द्र ने 1985 में रद्द कर दिया क्योंकि इसके लिये पर्यावरण प्रबंध कार्यक्रम संतोषजनक नहीं था। तब एक दूसरी समिति ने नयी रिपोर्ट देकर परियोजना को स्वीकृति देने की सिफारिश की। केन्द्र ने 1986 में तालछेड़ सुपर ताप बिजलीघर के लिए प्रस्तावित स्थल को रद्द कर दिया तथा उसके बदले एक नये स्थल का सुझाव दिया। मध्य प्रदेश में नर्मदा सागर परियोजना को पर्यावरण कारणों से स्वीकृति अभी तक नहीं मिली है। पर्यावरण तथा विकास के बीच संघर्ष जारी है।

बहु-उद्देशीय खंड-कितने सफल

बहु-उद्देशीय आदिवासी खंड परियोजना कई दशकों के बाद भी आशातीत परिणाम पूरी तरह नहीं दे पायी है।

पर, कुछ आदिवासी क्षेत्रों में विकास कार्यों के निस्संदेह उत्साहजनक परिणाम रहे हैं। उदाहरण के लिए बिहार के छोटा नागपुर क्षेत्र में हुये काम को लें। क्हां रांची का रामकृष्ण मिशन उल्लेखनीय काम कर रहा है। भारतीय कृषि अनुसंधान केन्द्र (कृषि विज्ञान केन्द्र) तथा कुछ सरकारी गैर-सरकारी एजेंसियां भी सराहनीय काम कर रही हैं। रामकृष्ण मिशन ने एक दशक से पहले इस क्षेत्र में एक कार्यक्रम आरंभ किया था जिसके अन्तर्गत यह संस्था आदिवासियों को कृषि, बागवानी, पशुपालन, मधुमक्खी पालन, मुर्गियां आदि पालने तथा रेशम के कीड़े पालने आदि के वैज्ञानिक तरीकों की जानकारी देकर उनका जीवन स्तर सुधारने में बहुत योगदान कर रही है। समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत कई परिवारों को गरीबी की रेखा से ऊपर लाया गया है। रांची के सिल्ली खंड में अब गेहूं भी बोया जाता है। पहले इस क्षेत्र में एक ही फसल ली जाती थी। वन लगाने की योजना भी सफलता से चलायी जा रही है।

विशेषज्ञों का कहना है कि छोटा नागपुर क्षेत्र मधुमक्खी पालन के लिये बड़ा ही उपयुक्त है। जंगली फूल मधु से भरपूर हैं और वर्षा के प्रभाव से बचा रहने वाला स्थानीय गांबर पेड़ मधुमक्खी बक्सों के लिए अत्यंत उपयुक्त है। अनेक गांवों में आदिवासियों को मधुमक्खी पालने का प्रशिक्षण दिया गया है। कारारा गांव का नाम अब मधुग्राम पड़ गया है। वहां 26 बक्सों में शहद एकत्र किया जाता है।

अनुवाद: ओ.पी. दत्त
96, भारत नगर,
दिल्ली-110052

आंधी के बाद की शांति

डॉ. शीतांशु भारद्वाज

पश्चिमी टीबों की ओर सेवही धूल भरी आंधी उमड़ आई थी। जल्द ही आस-पास के गांवों और बस्तियों में रेल बिछ जायेगी। गर्म हवायें कच्चे घरों के टीन-टप्पड़ को उड़ा कर इधर-उधर बिखेरने लगेंगी।

घर के आंगन में एक ओर खड़ी बेला उस तेज आंधी को देखती आ रही थी। उसके अंतःकरण में भी तो ऐसा ही अंधड़ चला आ रहा था। न उसका इस घर में विवाह होता, न ही उसको ये दुर्दिन देखने को मिलते। ऐसे में वह मां-बाप को भी तो दोष नहीं दे सकती! दूल्हे के रूप में उसने माणू को खुद ही तो पसंद किया था। तब उसे क्या पता था कि वही भोला-भाला चेहरा एक दिन राक्षसी चेहरे में बदल जायेगा!

उस दिन वह मां के साथ शरद पूर्णिमा के मेले में गई हुई थी। वहीं एक ओर तपड़ पर बहुत-सी गाड़ियां खड़ी थीं। वहां एक लॉरी की अगली सीट पर बैठा हुआ माणु बेफिक्री के साथ बीड़ी फूंकता आ रहा था।

अरी बेला! मां ने उससे कहा था, वे रहे अपने जंवाई।

हुंह! यह भी क्या बात हुई कि खाने-खेलने के दिनों में कोई बाबाओं की तरह से दाढ़ी बढ़ा ले! उसने सोचा था। विवाह के बाद से वह उससे दाढ़ी मुंढ़वाने को कहेगी। उसके चेहरे पर नुकीली मूंछें कितनी भली लगेंगी! वह भविष्य के सपनों में डूबने लगी थी।

लग्न खुलते ही उसका विवाह हो गया था।

हमारी बहू बड़ी भागवान आई है। उसके श्वसुर ने कहा था, छोरा कलीनर से डिरेबर बन गया है।

बेला सचमुच ही भाग्यवती थी। उसके घर आते ही वहां अन्न-धन की बढ़ोतरी होने लगी थी। सास ने तो उसको सिर-आंखों पर ही बैठा लिया था। माणू दिन भर गाड़ी चला कर जब शाम को घर लौटता तो वह उसे फूलों की तरह से सहलाने लगता था।

दिन बीतते-बीतते चार बरस यूं ही बीत गये। सास की चिप-चिपी आंखें हर समय ही बेला के तन-बदन को टटोलती रहतीं। जब-तब वे उसे विश्वास में लेकर पूछा करतीं, बहू, है कुछ?

बेला कुछ न कह कर चुपचाप आंखें चुरा लेती। सास की पोते का मुंह देखने की ललक बढ़ती ही गई। माणू भी धीरे-धीरे बदलने लगा था। कभी वह गले पर कोई तावीज पहनता तो कभी दूध के साथ कोई गोली ले लेता।

उस दिन बेला बीहड़ से घास लेकर घर लौटी थी। अंदर घर में वैद्यजी पधारे हुए थे। घास का गट्ठर बाहर आंगन में एक कोने पर उतार कर वहीं से अंदर की टोह लेने लगी थी।

तेल, खटाई, मिर्च-मसाले का परहेज रखना होगा। वैद्यजी माणू को शर्तिया औलाद होने का नुस्खा बतला रहे थे, सबर का फल मीठा हुआ करता है।

तब से माणू बिना नागा ही काले रंग की गोलियां लेता रहता। बेला के मन-प्राण भी तो बच्चे के लिए ललकते रहते। सास की अनुभवी आंखें उसी प्रकार उसका जिस्म टटोलती रहतीं। किंतु माणू पर नीम हकीमों की दवाओं का कोई असर नहीं हुआ। धीरे-धीरे वह बेला के प्रति उदासीन रहने लगा। उसके स्वभाव में भी परिवर्तन आने लगा था। रात को जब वह काम से घर लौटता तो उसके मुंह से शराब की तीखी गंध फूट रही होती। आते ही वह उसे बाघ की तरह झिंझोड़ने लगता। वह उफ तक न कर पाती। आज भी वह उसके अत्याचारों को चुपचाप झेलती आ रही है।

इधर पिछले कुछ दिनों से माणू का स्वास्थ्य भी गिरने लगा है। उसकी स्याह मूंछें भी भूरी होने लगी हैं। आंखें तो अंदर गड्ढों में ही धंस गई हैं। रात-रात भर वह खांसता-खंखारता रहता है। पिछले दो-तीन दिन से बेला भी अपने में कुछ बदलाव महसूस करने लगी है। हर घड़ी उसके दांत कुछ-न-कुछ कुतरने के लिये मचलते रहते हैं। किंतु मन की बात वह किसी से भी तो नहीं कह पाती।

पश्चिम से उठती हुई वह आंधी पेड़-पौधों को उखाड़ती हुई पूर्व की ओर फैलने लगी थी। चारों ओर अंधकार छा गया था। तभी बेला का जी मितलाने लगा। वह वहीं आंगन में ही उल्टियां करने लगी।

सास न जाने कब से उसकी उस मनोदशा को ताड़ती आ रही थी। वे उल्टी करती हुई बहू की पसलियां दबाने लगीं।

खट्टे को भी मन करता है न? सास के ओठों पर रहस्यभरी मुस्कान उभर आई।

बेला ने 'हां' के अंदाज में सिर हिलाया और कुल्ला करने लगी।

सास-श्वसुर को लगने लगा जैसे कि मरुस्थल में नखलिस्तान निकल आया हो। उनकी बुझी हुई आशा फिर से हरी होने लगी। देवताओं की मनौतियां मनाई जाने लगीं। बेला अलग कमरे में खाट पर निढ़ाल पड़ गई।

उसका मन माणू के लिए भटक रहा था। ऐसी आंधी में वह गाड़ी कैसे चला रहा होगा? कहीं उसने पी तो नहीं रखी होगी? उसका मन बुरी-बुरी आशंकाओं से घिरा जा रहा था।

सांझ ढले आंधी थम गई। किन्तु बेला के अंदर अब भी वही वैचारिक अंधड़ चल रही थी। वह उसी में उड़ती जा रही थी। सास घर में दीया-बाती जलाने लगीं।

उठ कर बैठ जा बहू! सास खाट की पाटी पर बैठ कर बोलीं,शाम के बखत खाट थामना ठीक नहीं होता।

बेला के ओंठों पर मुस्कान उभर आई। वह खाट पर ठीक प्रकार से बैठ गई। सास ने उसके मुंह में मिठाई का टुकड़ा डाल दिया। तभी बाहर कहीं आहट हुई। सास कमरे से बाहर जाने लगी, माणू आ गया है शायद।

बेला अब भी नहीं समझ पा रही थी कि वह अपने भटके हुए पति को किस प्रकार से सही राह पर लाये! तमाम दिन वह उसी उधेड़-बुन में रही। तभी उसके मस्तिष्क में एक विचार कौंध गया। सोच कर वह अपने आप ही मुस्कुरा दी।

माणू अंदर कमरे में आया तो बेला ने उसकी ओर से पीठ फेर ली। वह मान करने लगी। अब वह जेब से पौव्वा निकाल कर पियेगा। उसके बाद वह उसको बाघ की तरह झिंझोड़ने लगेगा। किन्तु ऐसा नहीं हुआ। कमरे में शराब की बू तक नहीं थी। इस पर बेला को आश्चर्य ही हुआ। कनखियों से ही उसने पति की ओर देखा। वह तो साधु-संत-सा लग रहा था।

-तबियत कैसी है बेलू? माणू ने धीरे-से उसके कंधे पर हाथ रख दिया।

बेला ने उसका हाथ एक ओर झटक दिया। माणू मुस्करा कर ही रह गया।

-माणू, रोटी खा ले। बाहर से मां की आवाज आई।

भोजन करने के लिए माणू रसोई-घर की ओर चल दिया। बेला अकेली ही रह गई। उसके कानों में मां के शब्द गूंजने लगे, "औरत जात के पास दो ही हथियार हुआ करते हैं। रोना और हंसना। इन्हीं से वह बिगड़े-से-बिगड़े मरद को भी अपने काबू में कर लेती है।"

नहीं, अब वह अपने पति को और अधिक नहीं भटकने देगी। उसका साथ या तो वही देगी या फिर शराब ही। बेला ने संकल्प कर लिया।

-मां ने आज परसाद बांटा था क्या? माणू ने अंदर कमरे में आकर उससे पूछा। उसने बेला की ठोडी उठानी चाही।

बेला पूर्ववत् मान किये रही। पति उसको गुदगुदाने लगा। फिर तो मान में ही उसकी बड़ी-बड़ी आंखें पति की ओर घूम गई। उसने पूछा आज उस मुई सौत को साथ नहीं लाये?

-कौन सी सौत? माणू का मुंह खुला-का-खुला रह गया।

-वही, शराब।

-अरे हां। मैं तो बतलाना ही भूल गया। माणू हंस दिया, अब तो मेरा भी इरादा बदलने लगा है।

बेला की आंखों में आश्चर्य उमड़ आया। अपने कानों पर उसे विश्वास ही नहीं हुआ। पति के लिए उसकी आंखों से प्रश्नों की झड़ी ही लग गई।

-सच! माणू ने उसके कंधे पर हाथ रख दिया, जल्द ही मैं बाप बनने जा रहा हूं। मैं नहीं चाहता कि लोग मेरे बेटे को शराबी का बेटा कहें।

बेला ने आंखें नचाकर पूछा, फिर कब से छोड़ रहे हो?

-आज ही से। माणू मुस्कुरा दिया।

-क्यों जी! इस मुई शराब में ऐसा क्या मिल जाता है जो...! बेला ने पति पर कटाक्ष किया।

-कुछ नहीं। यह लालपरी थोड़ा-सा नशा दे जाती थी। खटारा गाड़ियां खींचने में तकलीफ हुआ करती है न। माणू ने बताया, सो अब वह भी बंद कर दूंगा।

-शीशे में अपनी सूरत तो देख लेते। बेला ने उसके हाथ में जेबी-दर्पण थमा दिया।

दर्पण को देखकर माणू ऐसे चौंका जैसे कि उसे बिच्छू ने डंस लिया हो। उसका चेहरा चुसे हुए आम-सा हो आया था। अगले ही क्षण उसके होंठों पर मुस्कान उभर आई। वह पत्नी की आंखों में झांकने लगा, बोल तो सही, क्या होगा?

-चलो हटो! बेला शर्मसार हो आई।

-अच्छा छोड़। माणू का हाथ उसकी ओर बढ़ने लगा।

-पहले वचन दो। बेला का दायां हाथ उसकी ओर बढ़ने लगा।

-वचन देता हूं। माणू कुछ गंभीर हो आया, अब तो बता भई, क्या होगा?

-जो तुम चाहोगे। बेला लाज से भर आई। उसने निगाहें झुका लीं।

-मैं तो बेटा चाहता हूं। माणू खिलखिला कर हंस पड़ा। हंसने में बेला ने भी उसका साथ दिया।

-बेटा हो या बेटी। बेला बोली, "हमारे लिये तो दोनों ही एक जैसे हैं।"

रात को वे दोनों सोने के लिए बिस्तरों पर लेट गये। किन्तु उनमें से किसी को भी तो नींद नहीं आ पा रही थी। बेला निरंतर पति के स्वास्थ्य के बारे में सोचती जा रही थी। अगर यही हाल रहा तो...! अंततः उसने पूछ ही लिया, सुनो!

-हां। माणू भी जागा हुआ था।

-तुम बहुत दुबले हो आये हो। अब बीड़ी-सिगरेट भी छोड़ दो। बेला ने आशंका प्रकट की, कहीं फेफड़ों...।

अरे हां, याद आया। माणू जमुहाई लेकर बोला, सुबह दोनों ही अस्पताल चलते हैं। मेरी भी छुट्टी है।

-हां, वहां तुम्हारा एक्स-रे भी करवा लेंगे। बेला ने हामी भर ली।

-मैं तो करवाता ही रहूंगा।माणू ने कहा,फिलहाल तो डॉक्टर से तुम्हें...।

-धत्त! बेला लाज से गड़ने लगी।

माणू उसे गुदगुदा कर हंसाने लगा। हंसते-हंसते वे दोनों दोहरे होने लगे। न जाने कब उनकी आंख लग गई।

सुबह दिन क्षितिज से हाथ भर ऊपर निकल आया था। माणू बेला को हिलाने-डुलाने लगा, बेलू, उठ तो। सुबह हो गई है।

सुबह का कलेवा करने के बाद वे दोनों जिला अस्पताल चल दिये। अस्पताल समीप ही था। बेला को पति के साथ चलने में लाज आ रही थी। राह चलती हुई वह बार-बार आकाश को ताकती जा रही थी। माणू ने पूछा, उधर क्या देख रही है?

-देखती हूं कि कहीं अंधड़ न आ जाये! बेला उसे देखने लगी।

आंधियां बार-बार तो नहीं आती न! माणू ने हंसी का ठहाका लगा दिया, कल ही आंधी आई थी।

-हां, आई तो थी। बेला ने आशंका प्रकट की, फिर भी!

—नहीं, अब ऐसी आंधी आने की कोई संभावना नहीं है। माणू उसे भरोसा दिलाने लगा।

पति का कहा बेला को ठीक ही लगा। अपने अंतःस्थल में वह अजीब-सी शांति महसूस करने लगी। ऐसी शांति जिसकी उसे बरसों से तलाश थी। वह आंधी के बाद की शांति थी। दोनों आपस में बतियाते हुए अस्पताल की ओर जा रहे थे। कुछ ही मिनटों बाद वे अस्पताल के अहाते में चल दिये।

माणू ने खिड़की पर जाकर बेला की पर्ची बनवा ली। उसे लेकर वह डॉक्टर के कमरे में चल दिया। डॉक्टर ने बेला से साथ के कमरे में लेट जाने को कहा। माणू बाहर बरामदे में टहलने लगा।

पन्द्रह मिनट बाद बेला जब डॉक्टर के कमरे से बाहर निकली तो माणू उसके पास चल दिया। उसने उतावलेपन से पूछा, डॉक्टर क्या बोलीं?

-दूसरा है। बेला लाज-संकोच से भर आई।

-क्या होगा? गेट की ओर जाते हुए माणू ने उससे फिर वही प्रश्न कर दिया।

-लड़का या लड़की। इस बार बेला ने उस पर तीखा कटाक्ष कर दिया।

माणू भी मुस्कुरा दिया। बेला ठिठकी, अपना एक्स-रे नहीं करवाओगे?

-फिर और कभी सही। माणू ने बात टाल देने की गरज से कहा।

गेट से वे दोनों गांव की पगडंडी पर हो लिये। पति के साथ घर लौटती हुई बेला अब अपने को हवा से भी हल्की महसूस कर रही थी। उसके मन का सारा गर्दो-गुब्बार जो निकल गया था।

138, विद्या विहार
पिलानी-राज.
333 031

मध्य प्रदेश में पशुधन विकास

ग्राम्य-खुशहाली में सक्रिय हिस्सेदारी

आशीष खरे

मध्य प्रदेश की अर्थव्यवस्था में कृषि केन्द्रीय स्थान लिए हुए है। लगभग 80 प्रतिशत आबादी प्रदेश के 70 हजार गाँवों में निवास करती है। इसी बड़ी आबादी की आर्थिक उन्नति और खुशहाली सीधे-सीधे खेती-किसानी से जुड़ी हुई हैं । ग्रामीण इलाकों में जहाँ खेती उनका मुख्य आय स्रोत है वहीं 'पशुधन' उनका प्रमुख सहायक व पूरक आय का जरिया है ।

प्रदेश की कुल पशुधन संख्या 4.39 करोड़ है। प्रदेश में 2.70 करोड़ गोवंशीय, 64.15 लाख भैसवंशीय, 27.91 लाख भैसवंशीय प्रजनन योग्य मादा, 82.95 लाख गोवंशीय प्रजनन योग्य मादा, 9.58 लाख कुक्कुट और 14.70 लाख अन्य पशु हैं।

प्रदेश शासन ने राज्य के सर्वांगीण विकास के लिए अपनी योजनाएं बनाते समय पशुपालकों की कठिनाइयों को ध्यान में रखते हुए उनके योजनाबद्ध कार्यक्रम शुरू किए हैं । प्रदेश में पशुधन के परिरक्षण, संरक्षण व अभिवृद्धि, समुन्नत प्रजनन, चारा विकास, जैविक संस्थाएं, प्राणि उद्यान और उत्पादनों के प्रदाय, वितरण और मूल्य नियंत्रण के काम पूरी सजगता और सक्रियता से किए जा रहे हैं । इसके अतिरिक्त पशु चिकित्सा, चिकित्सा अनुसंधान औषधियों का निर्माण व अनुसंधान पशुचिकित्सा शिक्षा आदि के कामों को भी पूरा महत्व दिया जा रहा है । प्रदेश में इस समय 704 पशुचिकित्सालय, 1501 पशु औषधालय, 295 पशु चिकित्सा प्राथमिक उपचार केन्द्र, 90 चलित पशुचिकित्सालय व चल पशु विरूजालय 22 रोग अनुसंधान प्रयोगशालाएं, एक मुहखुरी रोग व्यापिकी संस्थान, 2 जैविक उत्पादन संस्थान—सीरम संस्थान, और 3-3 पशुचिकित्सा क्षेत्र प्रशिक्षण संस्थान और पशु चिकित्सा विज्ञान महाविद्यालय हैं।

इसके अतिरिक्त 13 पशु प्रजनन प्रक्षेत्र, 9 वृषभ पालन प्रक्षेत्र, 10 गोसदन, 36 गोशालायें, 22 गहन पशु विकास दुग्ध पशु उत्पादन परियोजनायें, 8 नियंत्रित पशु प्रजनन परियोजनायें, 19 कृत्रिम गर्भधान केन्द्र, 24 गहनीकृत मुख्य ग्राम खण्ड, 574 पशु प्रजनन विस्तार इकाईयां, 70 हिमीकृत वीर्य प्रजनन इकाईयां, 582 कृत्रिम गर्भाधान इकाईयां और एक चारा उत्पादन प्रायोगिक प्रक्षेत्र है।

कुक्कुट विकास के लिए 13 कुक्कुट पालन प्रक्षेत्र, एक-एक बतख पालन प्रक्षेत्र व कुक्कुट अनुसंधान एवं सभ्य पक्षियों के उत्पादन हेतु संस्थान और 10 कुक्कुट उत्पादन एवं विपणन परियोजना है । इसी प्रकार प्रदेश में 4 भेड़ प्रजनन प्रक्षेत्र, 2-2 बकरी प्रजनन प्रक्षेत्र व सूकर पालन प्रक्षेत्र 22 भेड़ एवं विस्तार केन्द्र और 400 पशु चिकित्सालय — औषधालय में बकरी प्रजजन केन्द्र हैं।

दो वर्ष की उपलब्धियाँ

पिछले दो वर्ष में पशुपालन के विकास कार्यक्रमों की दृष्टि से महत्वपूर्ण समय साबित हुआ। निर्धारित लक्ष्यों से कहीं ज्यादा उपलब्धियाँ इस तथ्य को पूरी प्रखरता से रेखांकित करती हैं ।

पिछले दो सालों में 5960 हजार मीट्रिक टन दूध, 1520 मिलियन अंडों, 17.86 लाख कि.ग्रा. ऊन का उत्पादन हुआ। कृत्रिम गर्भाधान कार्यक्रम से 5.56 लाख से अधिक पशुओं को स्वास्थ्य सुविधाओं का लाभ मिला। 170 पशु औषधालयों की स्थापना की गई ।

विभिन्न व्यक्ति मूलक और परिवार मूलक कार्यक्रमों के तहत गुजरे हुए दो सालों में 61 हजार से ज्यादा हितग्राहियों को लाभान्वित किया गया । इनमें 25 हजार से अधिक सामान्य वर्ग के, 12 हजार से अधिक आदिवासी वर्ग के और 13 हजार से अधिक हरिजन वर्ग के हितग्राही हैं ।

इसके अतिरिक्त 120.50 लाख पशुओं का उपचार, 43.91 लाख को औषधि प्रदाय, 217.51 पशुओं को प्रतिबंधक टीका, 597.00 लाख टीका द्रव्य उत्पादन, 9.56 लाख बंधियाकरण, 525 लाख उन्नत नस्ल के साण्ड उत्पादन

4.22 लाख कृत्रिम गर्भाधान, 1.56 लाख प्राकृतिक गर्भाधान और 1.79 लाख वत्स उत्पादन हुए ।

पिछले दो वर्षों की उपलब्धियों में विशेषतया 170 पशु औषधालयों की स्थापना, स्थानीय निकायों द्वारा संचालित पशु चिकित्सालयों औषधालयों का विभाग को हस्तान्तरण, हाई सिक्योरिटी पशु रोग जांच प्रयोगशाला की स्थापना संबंधी कार्यवाही प्रारंभ, नवीन पशु चिकित्सा विज्ञान महाविद्यालय की अंजोरा (दुर्ग) में स्थापना, सनावद में पशु चिकित्सालय भवन व आवास गृहों की निर्माण की स्वीकृति, राज्य पशु चिकित्सा परिषद् की स्थापना संबंधी कार्यवाही, दो नवीन उन्नत दुधारू पशु उत्पादन परियोजनाओं की स्थापना, दिनारा (शिवपुरी) में मुख्य ग्राम खण्ड की स्थापना, हिमीकृत वीर्य प्रजनन सुविधा विस्तार कार्यक्रम के तहत 7 तरल नेत्रजन संयंत्रों एवं 390 इकाईयों की स्थापना, 10 हरिजन बाहुल्य जिलों में सघन कुक्कुट उत्पादन कार्यक्रमों की स्थापना, विशेष पशुपालन का कार्यक्रम का संचालन, ग्वालियर में मध्य क्षेत्रीय पशुधन एवं कुक्कुट प्रदर्शनी का आयोजन और जन जागृति सम्मेलन विज्ञान मडई के अंजोरा दुर्ग में आयोजन के अतंर्गत पशु-पक्षी प्रदर्शनी का आयोजन प्रमुख हैं ।

वर्ष 1987-88 विकास की चुनौतियों का वर्ष

नए वर्ष 1987-88 के बजट में पशुपालन विकास कार्यक्रमों के लिए 3561.05 लाख रुपये का प्रावधान किया गया है ।

इस वर्ष में 3221 टन दूध, 820 मिलियन अंडे, 9.10 लाख मी० कि. ग्रा. ऊन के उत्पादन का लक्ष्य है। इस वर्ष 17680 पशुधन संख्या पर एक चिकित्सा संस्थान की सुविधा उपलब्ध करा दी जायेगी। 26 लाख प्रजनन योग्य मादाओं को उन्नत प्रजनन सुविधाएं मुहैया कराने का लक्ष्य है।

साथ ही पशु चिकित्सा महाविद्यालय अंजोरा दुर्ग में सुविधाओं का और हिमीकृत वीर्य प्रजनन कार्यक्रम का विस्तार किया जायेगा । हाई सीक्योरिटी पशु रोग जाँच प्रयोगशाला की स्थापना संबंधी द्वितीय चरण की कार्यवाही शुरू की जाएगी । पांच जिलों में उप संचालक पशु चिकित्सासेवाओंके पदों का सृजन किया जा रहा है । कुक्कुट पालन क्षेत्र प्रक्षेत्र गुना का कार्य इस वर्ष प्रारंभ होगा ।

विभिन्न व्यक्तिमूलक और परिवारमूलक कार्यक्रमों के जरिए 8400 आदिवासी, 11,757 हरिजन कुल 29,985 हितग्राहियों को लाभान्वित किये जाने का लक्ष्य निम्नानुसार है :

सं.	कार्यक्रम		संख्या
1.	दुधारू पशु इकाईयों का प्रदाय संकरजर्सी वत्सपालन हेतु	आदिवासी	2792
	अनुदान	हरिजन	642
2.	बकरी इकाईयों का प्रदाय	आदिवासी	890
3.	सूकर इकाईयों का प्रदाय	हरिजन	490
		आदिवासी	182
		हरिजन	370
4.	सूकर त्रयियों प्रदाय	आदिवासी	100
		आदिवासी	544
5.	उन्नत नस्ल के बकरों का प्रदाय	हरिजन	370
6.	कुक्कुट इकाइयों का प्रदाय	आदिवासी	2700
		हरिजन	8325
7.	चारा प्रदर्शन भूखण्ड कुट्टी संयंत्र प्रशिक्षण कार्यक्रम आदि हेतु अनुदान	सामान्य	8400
		आदिवासी	2620
		हरिजन	1560
	योग	सामान्य	8400
		आदिवासी	9828
		हरिजन	11757

सातवीं पंचवर्षीय योजना

सातवीं पंचवर्षीय योजना का उद्देश्य पशु स्वास्थ्य रक्षा, उन्नत प्रजनन, पशु कुक्कुट, भेड़, बकरी, सूकर विकास के जरिये उत्पादन में वृद्धि करना एवं कमोजर वर्ग के हितग्राहियों को पशुपालन के माध्यम से आर्थिक लाभ पहुँचाना है ।

पशु उत्पादन की मांग एवं उपलब्धता के अन्तर को कम करने के लिए शासन द्वारा पशु विकास कार्यक्रम को प्राथमिकता दी जा रही है । जिससे लोगों को पौष्टिक खुराक, कृषि के लिए अच्छे बैल एवं बेरोजगारों को रोजगार के अवसर प्रदान होंगे । साथ ही आर्थिक रूप से पिछड़े वर्गों की आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति सुधारने के लिए विशेष ध्यान रखते हुए

जिससे दुधारू पशुओं के मर जाने का खतरा बना रहता है। वास्तव में सौर उर्ज के इन खम्बों में विद्युत खम्बों की तरह बिजली का प्रवाह जारी नहीं रहता और न ही बिजली के तार उन पर बंधे रहते हैं। प्रत्येक खम्बा अपने आप में जनरेटर का काम करता है। और फिर रविवार 4 जनवरी को जब यह सौर ऊर्जा (स्ट्रीट लाइटें) जगमगा उठीं तो गांव के लोग आनंद व आश्चर्य से झूम उठे। पहाड़ी व जंगली इलाकों के इन लोगों को रात के नितांत अंधकार में रोशनी के पहली बार दर्शन हुए।

इस प्रथम अभिनव प्रयोग का यदि राष्ट्रीय स्तर पर विस्तार किया जाए तो इसमें कोई सन्देह की गुंजाइश नहीं कि थर्मल पावर व बिजली घरों की अनुपस्थिति में भी स्थानीय तौर पर कम खर्च में अन्धकार को प्रकाश में रूपान्तरित किया जा सकता है। अभी दूर-दराज के हजारों गांव व लाखों लोग बिजली से वंचित हैं। अतः उन तक आसानी से बिजली पहुंचायी जा सकती है। पिछड़े हुए इलाके जंगल व पहाड़ी क्षेत्रों के लिए यह प्रयोग वास्तव में आशीर्वाद रूप बन सकता है।

गुजरात विद्युत बोर्ड द्वारा स्ट्रीट लाइट के ऐसे 9 प्वाइंट खड़े किए गए हैं। प्रथम प्रयोग सफल रहा है। अब आदिवासी तथा अन्यत्र क्षेत्रों में भी सौर ऊर्जा द्वारा प्रकाश पहुंचाया जायेगा।

फिर मजे की बात तो यह है कि प्राथमिक खर्च के बाद बिजली तो मुफ्त में ही मिलती रहेगी। हर महीने बिजली का बिल भरने के लिए लाइन में खड़े होने का कोई झंझट नहीं रहेगा। ओम् सूर्याय नमः ।। सूर्य देव को नमस्कार है।

7112, जंक्शन प्लांट,
राजकोट-360001

सुन्दर अपने गांव हों

मोहन चन्द्र मंटन,

हों न गन्दगी साफ हवा हो,
निर्मल जल हो यही दवा हो,
जीने को क्या और चाहिए,
प्रेम पूर्ण जीवन निबाहिये।
आपस में संबंध बने हों,
झगड़ों में कोई न तने हों।
पेड़ों की शीतल छाहों में,
थके हुओं के लिए ठांव हों।
सुन्दर अपने गांव हों।।

फल फूलों से लदे पेड़ हों,
हरी-भरी खेतों की मेड़ हों।
खेतों में कर सकें बुआई,
खेतों की कर सकें सिंचाई।
संवरे अपने घर आंगन हों,
त्यौहारों के मंगल क्षण हो,
रूप संवारे हुए गांव हों,
सुन्दर अपने........।।

खेती के उन्नत साधन हों।
मेहनत से पा सकते धन हों।
न हो किसी को कहीं रुकावट।
शोषण की हो कहीं न आहट।
दुःख-दर्दों के रहें न मारे,
हों खुशहाल किसान हमारे।
सुख का लिए पड़ाव हों,
सुन्दर अपने गांव हों।।

ए-बी-904, सरोजिनी नगर,
नई दिल्ली.

भूमि कटाव रोकने के लिए इलायची उगाइये

दीपक चन्द्र उप्रेती

भूमि कटाव एक जटिल समस्या है, जिससे एक ओर मिट्टी का बहुल्य भाग बह जाता है तो दूसरी ओर फसल भी नष्ट हो जाती है। यह समस्या मैदानी भागों में कुछ कम तथा पर्वतीय भागों में अधिक जटिल है। जिस कारण पर्वती क्षेत्र का कृषक सालभर मेहनत करता है किन्तु बरसात में उसकी मेहनत को कभी-कभी बड़ी हानि भी उठानी पड़ती है।

भूमि कटाव की यह समस्या पर्वतीय क्षेत्र में उन स्थानों पर अधिक होती है जहां की भूमि जल संग्रहण करती है और दल-दली होती है, ऐसे स्थानों में चूंकि किसान जल युक्त भूमि को धान के लिए उपयोगी समझकर अपना प्रयास तो करता है किन्तु प्रायः उसे इसका विपरीत ही फल मिलता है। वैसे भूमि कटाव को रोकने के लिए छोटी-छोटी दिवारे या अन्य प्रकार के पौधों का रोपण भी उचित सिद्ध हुआ है किन्तु इलायची को ऐसे संवेदनशील स्थानों में रोपित करना और अधिक सार्थक तथा आर्थिक आधार प्रदान करने वाला सिद्ध हुआ है। इसके कुछ महत्व निम्न प्रकार हैं:-

1- इलायची की खेती बहुत सरल होती है, यह नमीयुक्त भूमि में आसानी से उगाई तथा प्रसारित की जा सकती है।

2- इलायची की जड़ें जकड़ा होती हैं, जो भूमि को अच्छी तरह पकड़ कर बहने तथा कटने से रक्षा करती हैं।

3- इलायची की मांग बहुत अधिक है, अतः इसके उत्पादन का सीधा आर्थिक लाभ भी किसान को मिल जाता है।

4- इलायची के फलों के अलावा इसके पौधों को भी बिक्री किया जा सकता है क्योंकि इसके पौधों का विस्तार केले की तरह होता है।

इलायची की खेती के एक व्यावहारिक अध्ययन से पता चलता है कि इसका प्रत्येक पौधा 5 से 10 वर्षों के बीच में फल देने योग्य हो जाता है : इस अवधि में कोई भी पौधा कम से कम 500 से 600 ग्राम तैयार इलायची दे देता है, जिसकी कीमत सहकारी माध्यम से बिक्री करने पर 50 रुपये किलोग्राम है, अर्थात् इलायची का प्रत्येक पौधा 25 से 30 रुपये तक की आय दे सकता है। यदि कोई किसान अपनी इस तरह की भूमि कटाव वाली जगह में इलायची के पौधे रोप दे और यदि उसके कम से कम 100 पौधे भी फल देना शुरू कर दें तो उसे वार्षिक 3000 रुपये की आय प्राप्त हो जायेगी।

एक अन्य प्रयोग से यह भी ज्ञात हुआ है कि इलायची का पौधा फल देने के बाद प्रति दो वर्ष में दुगुना फल देता रहता है।

पर्वतीय क्षेत्र में अभी इस तरह के वैकल्पिक कृषि का प्रचार नहीं हो पाया है फिर भी कुछ तर्कशील किसानों ने अपनी बेकार भूमि में इलायची के पौधे रोपकर भूमि कटाव को रोकने के साथ-साथ अपना आर्थिक आधार भी ठीक किया है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि पर्वतीय कृषक इस बात की शिक्षा ग्रहण कर फसल के इस विकल्प को उठायें तो उसे निश्चित ही सफलता मिलेगी तथा उसका श्रम भी सार्थक होगा।

मुख्य रूप से मिट्टी के लक्षणों तथा व्यवहारों के आधार पर सोयाबीन, शहतूत, केला, इलायची आदि फसलों को उगाने का प्रयास करने पर कृषि के क्षेत्र में एक नयी क्रांति आ सकती है।

ग्राम एवं पो.-विनयक (थल)
जिला-पिथौरागढ़ (उ.प्र.)

(पृष्ठ 30 का शेष)

आदिवासियों से कम कीमत पर टोकनियां बनवाकर अधिक कीमत पर बाजारों में बेचते थे। लेकिन अब इनकी एक सहकारी संस्था गठित कर उसका पंजीयन करवाया गया है और "सिराली टांकनी सहकारी समिति मर्यादित बाई जगवाड़ा" के नाम की यह संस्था अपने सदस्य परिवारों को वन विभाग से एक ओर सस्ती दरों पर कच्चा माल उपलब्ध करा रही है दूसरी ओर उनका उनकी मेहनत का वाजिब दाम भी उन्हें दिलवा रही है। इस संस्था द्वारा बनाई गई टोकनियां कन्नौद क्षेत्र के शासकीय विभागों को 3 रुपये 75 पैसे और देवास के शासकीय विभागों को 4 रुपये प्रति टोकनी की दर से प्रदाय की जा रही है। इस संस्था ने सिंचाई विभाग देवास को दो हजार टोकनियां एवं कृषि विभाग को एक हजार टोकनियां प्रदान की हैं। इस सफलता में वन अधिकारियों की लगन और निष्ठा भी इन भोले-भाले वन-वासियों की फिर से संवरती जिन्दगी का बुनियादी हिस्सा है। □

वृक्ष पूजा के पात्र हैं

राजेन्द्र परदेसी

गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन को अपनी प्रधान विभूतियो के विषय में बताते हुए कहा है, - "अश्वत्थ: सर्ववृक्षाणाम्: अर्थात् वृक्ष भगवान की विभूति हैं, देव स्वरूप हैं, देवताओं की तरह मुनष्यों का कल्याण करने वाले हैं तथा उनकी श्रद्धा और पूजा के पात्र हैं।

इस दृष्टि से वृक्षों की रक्षा हमें देव विभूति के रूप में देवताओं की तरह करनी चाहिए ताकि वे पल्लवित और पुष्पित होकर हमारा कल्याण कर सकें। जिस तरह हम सभी पूजा स्थानों का निर्माण करते हैं उसी तरह हमें भगवान की विभूति-वृक्षों को लगाना चाहिए ताकि ये वृक्ष अधिक संख्या में उत्पन्न होकर, मानव-जाति को सुख और समृद्धि प्रदान कर सकें।

जैसे हम भगवान को सर्वव्यापी कहते हैं वैसे ही हमें भगवान की इस विभूति-वृक्षों को भूमि के हर भाग में (सर्वव्यापी) फैलाने की कामना करनी चाहिए क्योंकि वन हर एक देश की जलवायु पर गहरा प्रभाव डालते हैं। वैज्ञानिकों का कहना है कि गरम देशों की जलवायु को ठीक करने के लिए वहां के सम्पूर्ण क्षेत्र के एक तिहाई भाग पर जंगल अवश्य होने चाहिए। लकड़ी, ईंधन और अन्य लकड़ी के सामान, जो हमारे दैनिक जीवन में काम आते हैं और जिनका उपयोग कच्चे माल के रूप में उद्योग धन्धों में किया जाता है, वे हमें वनों से ही प्राप्त होते हैं। ये भूमि के रक्षण और उसमें आद्रता बनाए रखने में सहायक हैं तथा वनों से ही भूमि को पर्याप्त मात्रा में वर्षा का जल प्राप्त होता है।

वन भूमि का कटाव रोकने, पानी को पृथ्वी के भीतर प्रवेश कराने,जड़ों के द्वारा भूमि को बांधने और पहाड़ी ढालों पर पानी से पृथ्वी को कटने से रोकने का काम सुगमता से करते हैं। कभी-कभी जब वायु द्वारा भूमि का कटाव होता है और भूमि के अधिक उपजाऊ अंग दूसरी जगह पहुँच जाते हैं तो हमारे ये वन वायु के इस कटाव को भी रोकते हैं। वनों की सघनता और न्यूनता तथा वनों के अभाव के कारण वर्षा कहीं अधिक, कहीं कम और कहीं होती ही नहीं है। इस तरह वन, वर्षा के अधिक और कम होने पर भी प्रभाव डालते हैं।

प्राचीन काल में वनों को काटकर खेती करना भी पाप समझा जाता था। जब तक हमारी पुरानी पीढ़ियों के इन अच्छे विचारों के कारण देश के अधिक भागों में वन फैले रहे तब तक मनुष्य को किसी भी भयानक स्थिति का सामना नहीं करना पड़ा। लेकिन जब से वन काटे जाने लगे हैं तब से भूमि की कटान बढ़ गयी है। यदि इसी तरह वन काटे गये तो उपजाऊ भूमि के बाढ़ों के कारण बह जाने तथा भूमि के कट जाने से जो भूमि बची रह जायेगी उसमें मनुष्य रह नहीं सकता है। इस तरह वनों का काटा जाना मनुष्य के लिए घातक होगा।

वृक्ष हानिकारक गैसों का शोषण करते हैं वायु प्रदूषण में कार्बन-डाई-आक्साइड प्रमुख हानिकारक गैस है जो दहन, खसन,कूड़ा-करकट तथा मृत-जीवों के सड़ने से पैदा होती है। इससे मौसम में भारी परिवर्तन की सम्भावना रहती है। हरे पौधे इस गैस का शोषण प्रकाश-संश्लेषण की प्रक्रिया से कर लेते हैं जिसके कारण वायुमण्डल में इस गैस की मात्रा घट जाती है तथा ऑक्सीजन की मात्रा बढ़ जाती है। पौधों की विभिन्न जातियों में हानिकारक गैसों के शोषण की क्षमता भिन्न-भिन्न होती है। अत: जिस कारखाने से जिस गैस का प्रदूषण हो, वहां उस जाति के वृक्ष लगायें जो उस गैस का अधिक-से-अधिक मात्रा में शोषण कर सकें।

वृक्ष धूल से उत्पन्न प्रदूषण को रोकते हैं। धूल भरे वातावरण को कम करने के लिए वृक्षों, झाड़ियों और शाकीय पौधों की पत्तियाँ धूल कणों को अपने ऊपर जमा करके प्रदूषण को कम करती हैं। वृक्ष प्रदूषण को मालूम करने में भी मदद देते हैं। इस प्रकार के पौधों में प्रदूषक पदार्थों की निरापद स्तर से अधिक मात्रा होने पर विशेष प्रकार के चिह्न पैदा होते हैं जिसे देखकर वनस्पति-शास्त्री यह पता लगा लेते हैं कि अमुक स्थान पर किस प्रकार का प्रदूषण हैं। ये पौधे कई प्रदूषक पदार्थों के प्रभाव की जानकारी एक साथ देते हैं।

इस तरह हम देखते हैं कि यदि मनुष्य जाति को नष्ट होने से बचना है तो हमें वृक्षों को नहीं भूलना चाहिए। ये वृक्ष हमारी रक्षा करते हैं। अत: हमें भी अपने रक्षकों की रक्षा करनी चाहिए। यहीं नीति कहती है।

मालवीय रोड
बस्ती-272001
(उ. प्र.)

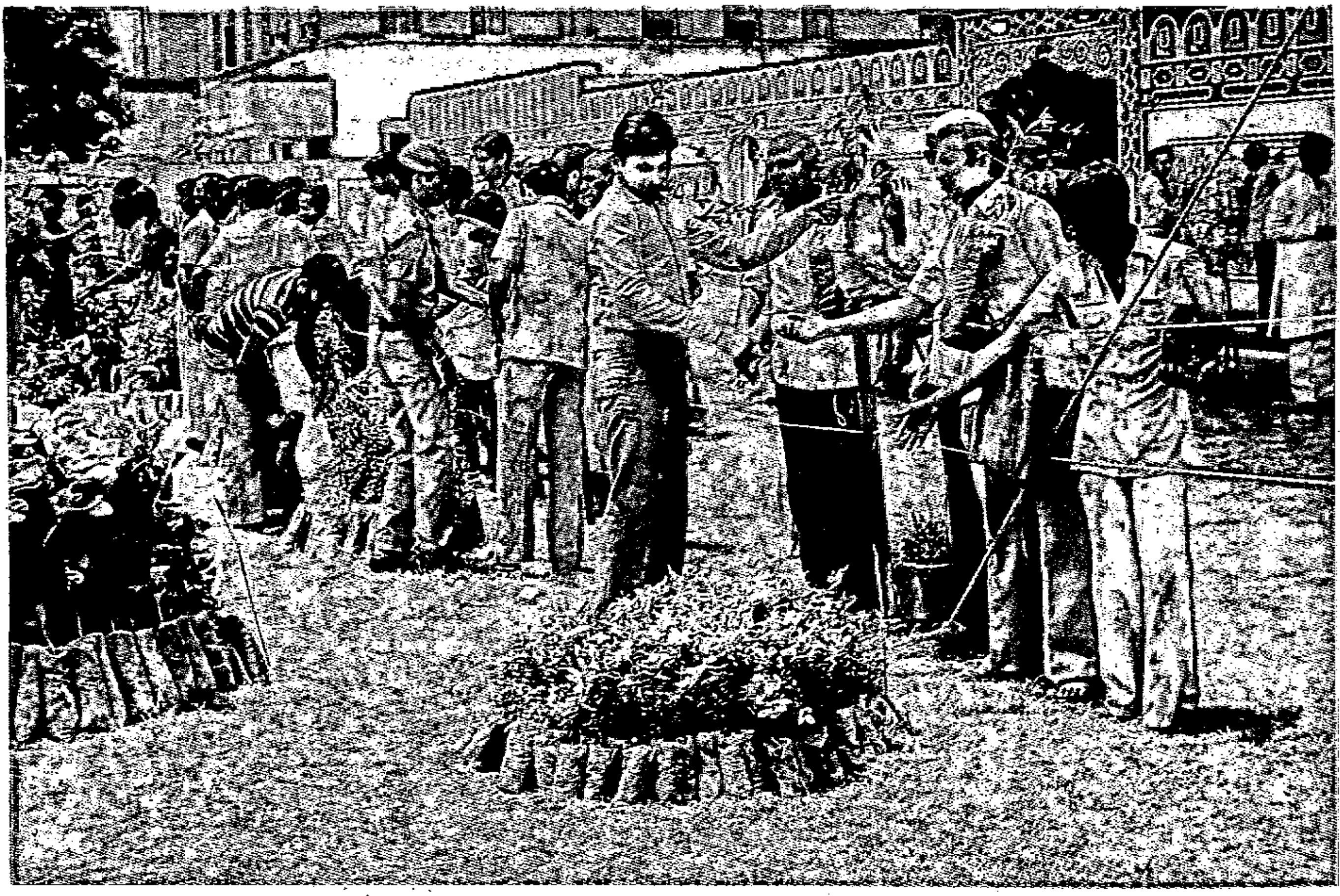

16. वन-विस्तार

हमः

- और ज्यादा पेड़ पौधे लगाने के लिए प्रोत्साहन देंगे तथा नये वन लगायेंगे और इस प्रयास में जनता को शामिल करेंगे;
- आदिवासियों और स्थानीय समुदाय के उन अधिकारों की रक्षा करेंगे जिनके अधीन वे ईंधन, लकड़ी और जंगलों की अन्य उपज प्राप्त करते हैं;
- परती ज़मीन को फिर से उपज योग्य बनायेंगे; और
- पर्वतों, रेगिस्तानों और समुद्र के किनारे वाले इलाकों को समुचित रूप से हरियाला बनायेंगे।

आर.एन./708/57
डाक-तार पंजीकरण संख्या : डी (डी एन) 98
पूर्व भुगतान के बिना एन.डी.पी.एस.ओ.. नई दिल्ली में डाक में डालने
की अनुमति (लाइसेंस) : यू (डी एन)-55

RN/708/57
P & T Regd. No. D (DN) 98
Licenced under U (DN)-55
to post without pre-payment at NDPSO, New Delhi

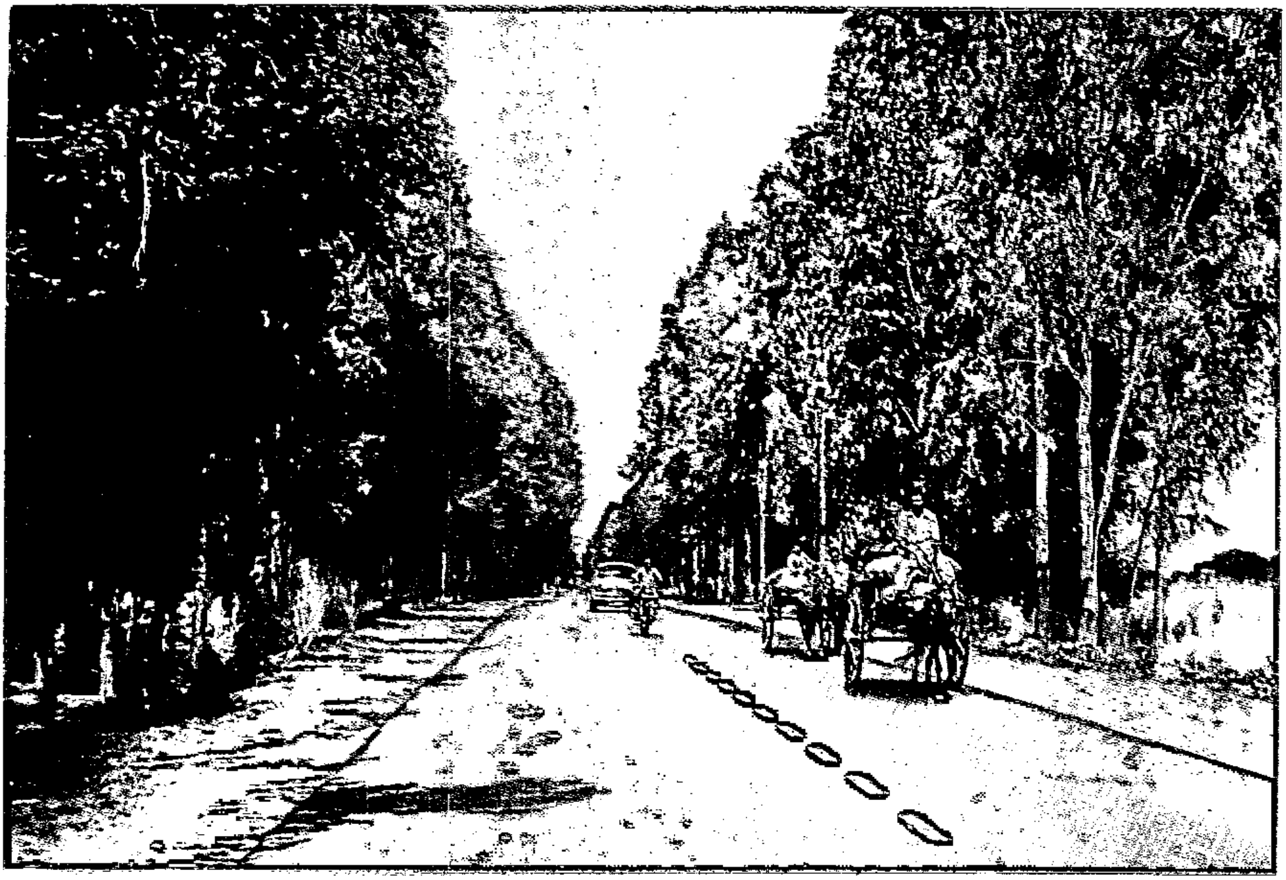

डा. श्याम सिंह शशि, निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित और
वीरेन्द्रा प्रिंटर्स, हरध्यान सिंह रोड, करोल बाग
नई दिल्ली-110005 द्वारा मुद्रित